CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
ग्रन्थालय
प्राप्ति क्रमांक ...१५८...

नव प्रभात

0152.2N12.1
L3

प्रभाकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

0152,2N12,1 ध्व03
L3

विष्णु पुराण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

0152, 2N12, 1
L3
92 53

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्दिशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय, वाराणसी।

0152,2N12,1 ध्व०३
L3
विष्णु पुराण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नव-प्रभात

—अशोककालीन ऐतिहासिक नाटक—

विष्णु प्रभाकर

१९७३

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

0152,2N12,1
L3

तेरहवीं बार, १९७३
मूल्य
दो एक रुपया पचास पैसे

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
वाराणसी
आगत क्रमांक..... 1973.....
क्रमांक.....

मुद्रक
लखेरवाल प्रेस,
नई दिल्ली

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

युद्ध से त्रस्त
बीसवीं सदी
की
मानवता
को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आमुख

इस नाटक के लिखे जाने का एक इतिहास है। मुझे इतिहास से प्रेम है, परन्तु फिर भी उसकी कथावस्तु को लेकर मैंने शायद ही कोई कहानी या एकांकी लिखा हो। वर्तमान युग में ही लिखने के लिए इतनी सामग्री है कि भूतकाल की ओर ध्यान नहीं जाता। आज का युग सामाजिक रचनाओं की मांग करता है, आज की समस्या को सुलझाना चाहता है और उसकी गति इतनी तेज है कि रुककर पीछे देखने का अवकाश ही नहीं मिलता। फिर भी यह नाटक लिखा गया।

गत-वर्ष आकाशवाणी के दिल्ली-स्टेशन के नारी-विभाग में रेडियो-रूपकों का एक क्रम शुरू किया गया था। उसका शीर्षक था—"मैं भी मानव हूं" और उसका उद्देश्य पुरातन इतिहास के सुप्रसिद्ध व्यक्तियों की जीवन-झांकी देते हुए, यह बताना था कि उन्होंने कुछ भी क्यों न किया हो, वे थे मानव। 'अशोक' उन व्यक्तियों में सर्वप्रथम था और उसपर मुझे लिखना था। इस नाटक का प्रथम अंक लगभग वही रूपक है, जो मैंने दिल्ली रेडियो के लिए लिखा था। वहां से यह अनेक बार प्रसारित हो चुका है।

कुछ दिन बाद आकाशवाणी के उस विभाग से, जहां से भारत के अतिरिक्त अन्य देशों के लिए कार्यक्रम प्रसारित होते हैं, एक और क्रम शुरू हुआ। उसका शीर्षक था—'इतिहास का एक पृष्ठ'। उसमें भारत के इतिहास की कुछ गौरवमयी कहानियों की झांकी दी जाती थी। उसके लिए मैंने अपनी पारी में 'अशोक' को चुना और 'देवानांप्रिय' के नाम से एक रेडियो-रूपक लिखा। उसमें दिखाया गया था कि अशोक 'धर्म-लिपियां' लिखवा रहा है और अपने जीवन की घटनाओं को याद करता जाता है। दूसरे अंक की कथा उसी रूपक से ली गई है। एक शिला-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लेख में ये शब्द आते हैं—"जहां लोगों का इस प्रकार वध, मरण और देश-निकला हो, ऐसा जीतना न जीतने के बराबर है।" इन शब्दों को बोलते-बोलते अशोक को कलिंग-युद्ध की याद आ जाती है और उसे याद आता है कि ये शब्द कलिंग की राजकुमारी ने कहे थे। इतिहास में इस बात की चर्चा नहीं आती—आ भी नहीं सकती। राजकुमारी मेरी कल्पना की सृष्टि है, पर यह नई कल्पना नहीं है। पहले भी कुछ लेखक ऐसी कल्पना कर चुके है। श्री जगदीशचन्द्र माथुर के एकांकी 'जय-पराजय'[1] में यह राजकुमारी उपस्थित है, यद्यपि संसार के मनुष्यों की भाँति मेरी और उनकी कल्पना-सृष्टि में अन्तर है। कलिंग-युद्ध के बाद अशोक के जीवन में जो महान् परिवर्तन हुआ, उसके लिए निस्सन्देह कुछ प्रबल कारण रहे होंगे। कुछ ऐसी घटनाएं घटी होंगी, कुछ ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो गई होंगी कि जिन्होंने अशोक के हृदय पर प्रबल आघात किये होंगे और उसे युद्ध से घृणा हो गई होगी। मैंने राजकुमारी की सृष्टि इसी दृष्टि से की है।

तीसरे अंक में जो कहानी है, वह इस दृष्टिकोण का चरम-विन्दु है। बिना इस प्रकार के प्रबल आघात के अशोक के हृदय में इतना गहन संघर्ष नहीं मचा होगा, जो भारत के इतिहास को पलट दे। यह अंक मेरी कहानी 'जीवन-दीप' का रूपान्तर है। दिल्ली की प्रसिद्ध साहित्यिक संस्था 'शनिवार-समाज' में मैंने इस कहानी को पढ़ा था। इस पर अच्छी चर्चा हुई थी। कुछ लोगों को कुमारी की आत्महत्या पर आपत्ति थी। कुमार की कल्पना कोई नई कल्पना नहीं है, परन्तु अधिकांश लोगों ने उसे या तो कलिंग-युद्ध में वीरतापूर्वक लड़ते-लड़ते प्राण देते चित्रित किया है या, धृष्टता के कारण, अशोक द्वारा उसको मृत्यु-दण्ड दिलाया है; परन्तु मैंने अशोक द्वारा मृत्यु-दण्ड दिलाकर दिखाया है कि पश्चात्ताप के कारण अशोक राजकुमार को फिर क्षमा कर देता है, लेकिन राज-कुमार सम्राट् अशोक की क्षमा ग्रहण नहीं करता और अवसर पाकर

---

१. यह एकांकी श्री सुमित्रानन्दन पन्त द्वारा सम्पादित 'रूपाभ' में प्रकाशित हुआ था।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आत्महत्या कर लेता है। उसकी आत्म-हत्या का उद्देश्य कायरता नहीं है, बल्कि अशोक के हृदय में पश्चात्ताप की जो आग सुलगने लगी है, उसे तेज करना है। यह कल्पना भी मूल में मेरी नहीं है। उड़िया की लेखिका श्रीमती सरस्वतीदेवी पाणिग्राही के नाटक 'कलिंग-विजय'[1] में यही कल्पना की गई है। हां, उस कल्पना का उद्देश्य मेरे उद्देश्य से कुछ भिन्न है। इस प्रकार राजकुमार की आत्महत्या की कल्पना सोद्देश्य है। वह इतिहास की दृष्टि से असत्य प्रमाणित हो सकती है, परन्तु अकारण प्रमाणित नहीं हो सकती। इतिहास की घटनाओं को तोड़ने-मरोड़ने अथवा उसके मनमाने अर्थ लगाने का हमें अधिकार नहीं है, परन्तु परिस्थितियों के अनुसार उचित कल्पना करने का अधिकार अवश्य है। हां, इस प्रकार की कल्पना से ऐतिहासिक सत्य को बल मिलना चाहिए। इस कल्पना से अशोक का हृदय-परिवर्तन होने की ऐतिहासिक घटना को यथेष्ट बल मिलता है। उसे अपनी पाशविक शक्ति के खोखलेपन का पता लगता है।

एक और नई कल्पना इस नाटक में की गई है। साधारणतया महेन्द्र और संघमित्रा अशोक के पुत्र और पुत्री प्रसिद्ध हैं, परन्तु मैंने उन्हें अशोक के भाई-बहिन बताया है। अशोक के परिवार के बारे में इतिहास निर्विवाद रूप से कुछ नहीं बताता। जन-श्रुतियों, गाथाओं तथा भारत और लंका के बौद्ध ग्रन्थों के आधार पर ही इतिहासकारों तथा दूसरे लेखकों ने उसका निश्चय किया है। 'दिव्यावदान' तथा 'महावंश' उनमें प्रमुख हैं। अशोक के शिला-लेखों, स्तम्भ-लेखों तथा गुहा-लेखों से उसके अनेक भाई-बहिनों, रानियों और पुत्र-पुत्रियों के होने का पता लगता है, परन्तु नाम एक-दो के ही आते हैं। उदाहरण के लिए 'महावंश' के अनुसार सन्धिमित्रा अशोक की प्रधान रानी थी। इसके अनुसार एक रानी, जिसका नाम 'देवी' था, उज्जैन में रहती थी, महेन्द्र और संघमित्रा उसकी सन्तान थे। 'दिव्यावदान' (पृष्ठ ३९७-९८) सम्राट् की एक रानी का नाम तिष्यरक्षिता बताता है। कथा आती है कि इस रानी से सम्राट्

१. देखिये 'हंस', वर्ष ८, अंक १२, सितम्बर १९३८

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ने बुढ़ापे में विवाह किया था और उसके सुन्दर पुत्र कुणाल की आंखें इसी रानी ने निकलवाई थीं। शाक्य कुमारी और पद्मावती भी अशोक की रानियां बताई जाती हैं। पद्मावती का नाम गाथाओं में आता है और यह कुणाल की माता बताई गई है। कहीं-कहीं कुणाल की माता का नाम असन्धिमित्रा भी आता है, परन्तु गौण स्तम्भ-लेख (चतुर्थ) में जिस रानी का नाम है, वह 'कारुवाकी' है।

"देवानांप्रिय के अनुशासन से सर्वत्र महामात्रों को यह कहा जाय कि यहां जो कुछ भी दान द्वितीय रानी ने किये हों—चाहे आम्रकुञ्ज, चाहे धर्मशाला, चाहे अन्य कुछ, सबकी गणना रानी के नाम किये जायं। यह द्वितीय रानी कारुवाकी, तिवाला की माता की विनय है।"

मैंने अपने नाटक में इसी द्वितीय रानी 'कारुवाकी' को लिया है। सम्भवतः यह रानी अशोक को विशेष प्रिय थी। इसी लेख में कारुवाकी के पुत्र तिवाला[1] का नाम भी आया है। इस पुत्र के अतिरिक्त महेन्द्र, उज्जैनों, कुनाल और जालौका भी अशोक के पुत्र बताये गए हैं। हमें यहां महेन्द्र की चर्चा करनी है, क्योंकि उसके अतिरिक्त और किसीका सम्बन्ध इस नाटक से नहीं है। "उत्तरी बौद्ध अनुश्रुति महेन्द्र को अशोक का भाई कहती है, पर सिंहली वृत्तांतों के अनुसार वह उसका पुत्र था।" (भारतीय इतिहास की रूप-रेखा, जयचन्द्र विद्यालंकार, भाग २, खंड ४, प्रकरण १६, १३६अ, पृष्ठ ६७०)। सिंहली वृत्तांत से तात्पर्य 'महावंश' से है। यह सिद्ध हो चुका है कि उसके वृत्तांत असत्य भले ही न हों, परन्तु वे अनिवार्य रूप से अतिरंजित हैं। बौद्ध धर्म का अशोक पर क्या प्रभाव पड़ा, यह बताने के लिए उसे प्रारम्भिक जीवन में बड़ा क्रूर चित्रित किया गया है। लिखा गया है कि अपने ९९ भाइयों की हत्या करके अशोक गद्दी पर बैठा था। अब यह सिद्ध हो चुका है कि ऐसी कोई बात नहीं थी। हां, केवल एक भाई से उसका झगड़ा हुआ था। वह उसका सौतेला बड़ा भाई सुसीम था। सम्भवतः वह पिता का लाड़ला था या

१. कुछ विद्वानों का मत है कि यह कारुवाकी कुल या गोत्र का नाम है। 'कारुवाक' वंश की रीति के अनुसार व्यक्तिगत नाम नहीं दिया गया।
२. कहीं तीवर भी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शायद बौद्ध धर्म के प्रति रुझान न होने के कारण वह मगध की राजगद्दी पर बैठने योग्य नहीं समझा गया? कुछ भी हो, इसी एक भाई से अशोक का झगड़ा हुआ था। उसके शेष भाई उसके राज्य-काल में उपस्थित थे। सातवें स्तम्भ-लेख में लिखा है—

"यहां (पाटलिपुत्र) और बाहर के मेरे अवरोधों में वे महामात्रगण विविध भांति के कई आनन्द देनेवाले कार्यों में लगे हैं तथा पुण्य कार्यों की बढ़ती के हेतु और धर्मानुष्ठि के लिए मैंने आदेश किया है वे रानियों के और मेरे अतिरिक्त, और मेरे पुत्रों और अन्य देवी-कुमारों के दान-कार्य के लिए नियत किये जायं।"

श्री भगवतीप्रसाद पांथरी ने अपनी पुस्तक 'अशोक' में इस लेख पर टिप्पणी करते हुए लिखा है—"इस सन्दर्भ में 'देवीकुमारों' को अशोक की रानियों के पुत्र न समझा जाना चाहिए, अपितु ये देवीकुमार अशोक के पिता की रानियों अथवा देवियों के पुत्र थे—अर्थात् ये कुमार अशोक के सौतेले भाई थे।"[1]

पांचवें प्रधान शिलालेख में यह बात और भी स्पष्ट रूप से कही गई है।

"ये (धर्म-महामात्र) यहां (अथवा पाटलिपुत्र) तथा बाह्य दूरस्थ नगरों में मेरे तथा भाइयों और बहिनों से अन्तःपुर और मेरे अन्य सम्बन्धियों के यहां सर्वत्र नियुक्त हैं।"

यही नहीं, गाथाओं के अनुसार अशोक अपने भाई-बहिनों के प्रति बड़ा उदार और कृपालु था। वह उन्हें बहुत स्नेह करता था, विशेषकर महेन्द्र को लेकर उसके स्नेह की अनेक कथाएं प्रचलित हैं। एक गाथा में आता है कि महेन्द्र अशोक का सौतेला भाई था और बड़ा क्रूर, संयमहीन और अमर्यादित था। अशोक ने उसे बुलाया और भाई के स्नेह तथा पिता के प्रेम की याद दिलाकर समझाया। महेन्द्र ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और अन्त में वह 'अर्हत' हुआ। सम्राट् ने

१. पृष्ठ १०-११ (उनकी टिप्पणी का आधार EPI Indicaii 276 है।)
२. अशोक—भगवतीप्रसाद पांथरी, पृष्ठ १७।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महेन्द्र के रहने के लिए पाटलिपुत्र में कुछ गुफाएं प्रदान कीं। प्रसिद्ध चीनी यात्री फाहियान के अनुसार अशोक का भाई पहाड़ी पर एकान्तवास किया करता था। सम्राट् चाहते थे कि वह राजप्रासाद में आकर रहे, किन्तु वह नहीं आया। तब सम्राट् ने पाटलिपुत्र के पास ही उसके रहने के लिए एक गुफा बनवा दी।[1] यद्यपि फाहियान ने इस भाई का नाम नहीं दिया है तथापि सम्भवतः यह उपर्युक्त महेन्द्र ही है। श्युआन चुआङ्, (हुएनसांग) ने भी महेन्द्र को अशोक का वैमात्र भाई लिखा है और इसी कथा का विस्तार से वर्णन किया है।[2] अन्य ग्रन्थों में महेन्द्र की कथा दूसरे ढंग पर दी गई है। पाली-ग्रन्थों में उसे तिष्य कहा गया है, 'दिव्यावदान' में 'वितासोक' लिखा है और कुछ चीनी ग्रंथ उसे 'सुदन्त' और 'सुगाम' भी कहते हैं।[3]

जो हो, उपर्युक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि महेन्द्र अशोक का भाई था। वह सौतेला था और बौद्ध भी हो गया था। कुछ विद्वान् मानते हैं कि एक महेन्द्र अशोक का भी पुत्र था। कुछ किसी निश्चय पर नहीं पहुंचते। 'भारतीय इतिहास की रूपरेखा'[4] में श्री जयचन्द्र विद्यालंकार ने भी अनिश्चित बात लिखी है—"संगीति पूरी होने पर तिस्स ने अनेक प्रत्यंत देशों में बौद्ध शासन पहुंचाने को प्रचारक भिक्षुओं के वर्ग भेजे। अशोक का अपना बेटा या भाई महिन्द्र (महेन्द्र) भी उनमें एक वर्ग का नेता था।"

ऐसी अनिश्चित परिस्थिति में मैंने महेन्द्र को अशोक का भाई माना है और इस मान्यता का आधार उत्तरी बौद्ध ग्रंथ हैं। इन्हीं ग्रन्थों के आधार पर मैंने अशोक के धर्मगुरु का नाम उपगुप्त दिया है। कहीं-कहीं 'तिस्स' नाम भी आता है। सम्भवतः ये दोनों एक ही व्यक्ति थे।[5] मैंने

---

१. Si-yuki, Volume ii, p 91 'अशोक' पृष्ठ १२ पर उद्धृत।
२. हुएनसांग का भ्रमण-वृत्तान्त।
३. अशोक—म० प्र० पांथरी, पृष्ठ १२।
४. भाग २, खण्ड ४, प्रकरण १६, १३५ ए, पृष्ठ ६६५।
५. भारतीय इतिहास की रूपरेखा, पृष्ठ ६६५।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ही नहीं, कुछ और लेखकों ने भी महेन्द्र को भाई स्वीकार किया है और महेन्द्र को भाई मान लेने पर संघमित्रा स्वतः ही अशोक की बहिन बन जाती है, क्योंकि इस बात पर सब एकमत हैं कि संघमित्रा महेन्द्र की बहिन थी। संघमित्रा को अशोक की बहिन मानने का एक और भी कारण है। 'महावंश' के अनुसार, जिसमें महेन्द्र और संघमित्रा को अशोक का पुत्र-पत्री माना है, संघमित्रा का विवाह हो चुका था। उसके पति का नाम अग्निब्रह्मा तथा पुत्र का नाम सुमन था। अग्निब्रह्मा और सुमन के बारे में अनेक कथाएं आती हैं और तिथियों का ऐसा घोटाला है कि कुछ भी विश्वास करने को जी नहीं चाहता। 'महावंश' में लिखा है कि संघमित्रा ५९ वर्ष लंका में रही। मृत्यु के समय इसी ग्रन्थ में दूसरे स्थान पर लिखा है कि संघमित्रा अशोक के अभिषेक के १८वें वर्ष लंका गई (महावंश, प्रकरण २०वां)। इसके अनुसार कलिंग-युद्ध के समय उसकी आयु १० वर्ष की थी, क्योंकि कलिंग-युद्ध अभिषेक के ८ वर्ष बाद हुआ। 'महावंश' के अनुसार ही भिक्षुणी बनते समय संघमित्रा की आयु १८ वर्ष की थी और वह अभिषेक के छठे वर्ष संघ में प्रविष्ट हुई थी अर्थात् कलिंग-युद्ध से दो वर्ष पूर्व, (महावंश, प्रकरण ५वां) जो साधारण मान्यता के अनुसार ठीक नहीं है, क्योंकि युद्ध से पूर्व अशोक ब्राह्मणधर्म का अनुयायी था; पर यदि इस बात को ठीक मान भी लें तो इसके अनुसार युद्ध के समय संघमित्रा की आयु बीस वर्ष की आती है। इससे स्पष्ट है कि 'महावंश' की प्रत्येक बात प्रामाणिक और एकांत रूप से विश्वस्त नहीं है।

इसके अतिरिक्त मैंने इस नाटक में संघमित्रा और कलिंग-युवराज के प्रणय-सम्बन्ध का वर्णन किया है। इतिहास इस सम्बन्ध में मौन है। बौद्ध ग्रंथों, गाथाओं तथा अनुश्रुतियों में भी इसका उल्लेख मुझे कहीं नहीं मिला, परन्तु उड़ीसा की लेखिका श्रीमती सरस्वतीदेवी पाणिग्राही ने अपने नाटक 'कलिंग-विजय' में इस प्रणय-गाथा का वर्णन किया है। यद्यपि उन्होंने वहां संघमित्रा को अशोक की पुत्री माना है, तथापि 'महावंश' की

---

१. अशोक—भगवतीप्रसाद पांथरी, पृष्ठ २३४, २३५, २९६।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तिथियों के अनुसार यह संभव नहीं हो सकता, क्योंकि यदि उसकी आयु १० वर्ष की मानी जाय तो प्रणय का प्रश्न ही नहीं उठता, और २० वर्ष की मानी जाय तो उसका पति अग्निब्रह्मा और पुत्र सुमन उसके साथ रहे होंगे। ऐसी अवस्था में भी प्रणय नहीं हो सकता। इसलिए 'महावंश' की किसी भी बात को न मानकर मैंने संघमित्रा को अशोक की छोटी बहिन माना है। निःसंदेह वह सौतेली बहिन थी, क्योंकि महेन्द्र अशोक का सौतेला भाई था। इस कल्पना का प्रयोग भी मैंने अशोक के हृदय पर प्रबल आघात दिखाने के लिए किया है।

इतिहास, लेखों और गाथाओं में अशोक के कई भाइयों का नाम आता है, परन्तु बहिन का नाम केवल 'महावंश' में आता है। चौथे प्रकरण में लिखा है—

"रात को स्वप्न में राजा ने देखा कि उसकी आत्मा लोहो कुंभिया नरक में धकेल दी गई है। राजा बड़े व्याकुल हुए। इस संत्रास को मिटाने के लिए उसकी छोटी बहिन पावनी भिक्षुणी आनन्दी, जो बन्धनों से मुक्त हो चुकी थी, वायु द्वारा पहुंची और राजा से बोली—'जो काम तुमने किया है, वह बड़े अर्थ का है, धर्म के प्रमुख आचार्यों से इसका प्रायश्चित्त करो, उनके साथ सहयोग प्रदान कर सत्य धर्म (बौद्ध धर्म) का पक्ष ग्रहण करो। ऐसा करने में तुम्हें शांति मिलेगी।' लिखा है, अशोक ने बहिन के उपदेश का अक्षरशः पालन किया।[1]"

कथा सच हो या न हो, परंतु इससे इतना स्पष्ट है कि अशोक की बहिन थी। शिलालेख भी, जिनका जिक्र ऊपर आ चुका है, इस बात की पुष्टि करते हैं। इस प्रकार मेरी कल्पनाएं कोरी कल्पनाएं नहीं हैं। उनकी नींव सुदृढ़ है।

जहांतक नाटक की मूल कथावस्तु का सम्बन्ध है, उसके विषय में दो मत नहीं हैं। कलिंग-युद्ध एक ऐतिहासिक घटना है और उसी तरह अशोक का हृदय-परिवर्तन भी। उसकी धर्म-लिपियों की भाषा उसके पश्चात्ताप की साक्षी है। वह पश्चात्ताप किसी सस्ती भावुकता का

१. अशोक—भगवतीप्रसाद पांथरी, पृष्ठ ११०-१३१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परिचय नहीं देता, बल्कि एक महान् राजनीतिज्ञ और एक महान् मानव के हृदय-मंथन की झांकी देता है। कलिंग-युद्ध में क्या हुआ, इसका वर्णन त्रयोदश प्रधान शिलालेख में किया गया है—

"देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा ने अभिषिक्त होने के आठवें वर्ष कलिंग को विजय किया। यहां से डेढ़ लाख आदमी बाहर ले जाये गए, एक लाख आदमी आहत हुए और इससे कई गुना वे थे, जो मरे। उसके पश्चात् जब कलिंग साम्राज्य में मिला दिया गया (अथवा कलिंग विजय हुआ) तबसे देवताओं के प्रिय का धर्माचरण बढ़ा; धर्म के स्नेह की वृद्धि हुई और धर्म का अत्यधिक विस्तार हुआ।"

इसी शिलालेख में, जो कि काफी लम्बा है, फिर लिखा है—

"जितने मनुष्य कलिंग-युद्ध में घायल हुए, मरे या कैद किये गए, उनके १००वें या १०००वें हिस्से का नाश भी अब महाराज अशोक के लिए बड़े दुःख का कारण होगा।"

"जो धर्म की विजय है, उसे ही देवताओं का प्रिय मुख्य मानता है। और वह देवताओं के प्रिय को यहां (अपने विजित में) और सभी अंतों में—सैकड़ों योजन पर अर्षों (पश्चिमी एशिया) में जहांतक अंतियोक नामक योन राजा है और उस अंतियोक के परे चार राजा हैं, तुरमय नामक, अन्तिकिन नामक, मक नामक और अलिक सुन्दर नामक (तथा) नीचे (दक्खिन तरफ) चोड़, पांड्य और ताम्रवर्णीवालों तक, ऐसे ही इधर राज-विषयों में (या राज-विषवासियों में) योन-कंबोजों में, नायक में, नाभ पंक्तियों में, भोज पितिनिकों में, अंध्र-पुलिंदों में, (सभी जगह)—प्राप्त हुआ है। सभी जगह देवताओं के प्रिय धर्मानुशासन का अनुसरण करते हैं, जहां देवताओं के प्रिय के दूत नहीं भी जाते, वे भी देवताओं के प्रिय धर्म-वृत्त को, विधान को और धर्मानुशासन को सुनकर धर्म का अनुविधान (आचरण) करते हैं और करेंगे। और इस प्रकार सब जगह

---

१. अशोक—भगवतीप्रसाद पांथरी, पृष्ठ १०८।

२. बौद्धकालीन भारत—जनार्दन भट्ट एम० ए०, पृष्ठ १२४।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो विजय प्राप्त हुई है, वह प्रीत रस-पूर्ण है।"

यह परिवर्तन निःसन्देह अद्भुत और महान् है, परन्तु एकदम ही नहीं हो गया था। यह कैसे हुआ, इसका सुन्दर और स्पष्ट वर्णन अशोक ने कलिंग-विजय के बाद चौथे बरस प्रकाशित अपनी पहली धर्म-लिपि (अभिलेख) में इस प्रकार किया है—

"अढ़ाई बरस से अधिक बीते कि मैं श्रावक (उपासक) हुआ हूं, पर मैंने अच्छा प्रक्रम (उद्यम) नहीं किया; बरस से ऊपर हुआ जब मैं संघ के पास पहुंचा और खूब प्रक्रम करने लगा। इस बीच जम्बूद्वीप (भारत-वर्ष) के मनुष्य को देवताओं से मिला दिया है, यह प्रक्रम का फल है। बड़े ही लोग यह फल पा सकते हों, सो नहीं। छोटा आदमी भी प्रक्रम से विपुल स्वर्ग पा सकता है। इसीलिए यह (आदेश) सुनाया गया कि छोटे-बड़े सभी प्रक्रम करें। अन्त भी जान जायं कि (हमारा) यह प्रक्रम है और चिरस्थायी हो। यह कार्य बढ़ेगा, निश्चय से बढ़ेगा, खूब बढ़ेगा, दिन-दूना रात-चौगुना बढ़ेगा।"

एक और प्रश्न उठ सकता है कि आखिर अशोक ने कलिंग-विजय क्यों किया? यद्यपि इस नाटक की कथावस्तु से इसका कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है, तो भी यह प्रश्न असंगत नहीं है। इसका उत्तर भी बड़ा सरल है। अशोक कुशल राजनीतिज्ञ था और चाणक्य की नीति का अनुसरण करते हुए वह समूचे भारत को मौर्य-साम्राज्य के अन्तर्गत लाना चाहता था। इतिहास का अच्छी तरह अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि कलिंग मौर्यों से पूर्व मगध के अधीन था। चन्द्रगुप्त ने जब नन्दों के विरुद्ध विद्रोह किया, तब वह स्वतन्त्र हो गया। चाणक्य ने चन्द्रगुप्त और फिर बिंदुसार के समय में इस जनपद को साम्राज्य में मिलाने की निरन्तर कोशिश की। तिब्बत के लामा तारानाथ के 'बौद्ध धर्म के इतिहास' (अ० १८) में लिखा है—"उसने करीब सोलह राज-धानियों के राजाओं और मन्त्रियों को उखाड़ डाला और एक लम्बे युद्ध के बाद पूरबी और पच्छिमी समुद्रों के बीच की समूची भूमि को राजा

१. भारतीय इतिहास की रूपरेखा—जयचन्द्र विद्यालंकार, भाग २, खंड ४, प्रकरण १६, १३५ ए, पृष्ठ ६६६।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बिंदुसार की अधीनता में ला दिया।" परन्तु वह कलिंग को न जीत सका। यद्यपि वह तीन ओर से मौर्य-विजित क्षेत्र से घिर गया था तो भी अपनी शक्तिशाली हस्ति और जल-सेना के कारण वह मगध-साम्राज्य से लोहा लेता रहा। चाणक्य की चातुरन्त राज्य-नीति को पूर्ण करने के लिए कलिंग को विजय करना आवश्यक था और वही अशोक ने किया। यदि वह ऐसा न करता तो कलिंग अपनी समृद्धि और शक्ति के कारण मौर्य-साम्राज्य के लिए घातक बन जाता।

साम्राज्यवाद की यह नीति बुरी थी या अच्छी, यह विचार यहां प्रसंगत है, फिर भी इतना स्पष्ट है कि कलिंग-युद्ध की क्रूरता और बर्बरता से अशोक का हृदय त्रस्त हो उठा था और उसने भविष्य में युद्ध न करने की घोषणा की। भेरी-नाद धर्म-घोष में परिवर्तित कर दिया गया। इस प्रकार साम्राज्य बना रहा; परन्तु उसका आधार हिंसा के स्थान पर उदारता, सहिष्णुता और मृदुता हो गये। आज का युग भी बहुत-कुछ अशोक-कालीन युग के समान है। साम्राज्य-लिप्सा ने संसार को त्रस्त कर रक्खा है। शस्त्र शक्ति का एकमात्र अवलम्ब है और उसके संघर्षण से मानवता घायल होकर सिसक रही है। अशोक ने जो संदेश अपने वंशधरों के लिए छोड़ा था, वह हमारे लिए कितना उपयुक्त है—

"मेरे पुत्र और परपौत्र शस्त्रों द्वारा विजय करने का विचार न करें। उन्हें उदारता (शान्ति) और सहिष्णुता अथवा दण्ड साम (मृदुता) में आनन्द मानना चाहिए। यदि उन्हें विजय में आनन्द आया तो धर्म-विजय को ही विजय समझना चाहिए। उसी विजय में आनन्द मानना चाहिए।"

परन्तु इस संदेश का अर्थ निष्क्रियता नहीं है, क्रिया है और इस नाटक की भिक्षुणी के शब्दों में—"क्रिया में अग्नि होती है। अग्नि जीवन की शर्त है। वह प्रकाश भी देती है और जलाती भी है। यह दूसरी बात है कि कुछ लोग अपनेको जला लेते हैं और कुछ अपनी दुर्बलता को।"

संक्षेप में इस नाटक की यही कहानी है। मेरे न चाहने पर भी यह लिखा गया। तीन बार तीन स्वतन्त्र एकांकियों के रूप में लिखा जाने के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कारण मैंने नाटक को तीन ही अंकों में पूर्ण कर दिया है। इस प्रकार दृश्यों का प्रयोग बिल्कुल नहीं हुआ है। हां, कुछ बातों का स्पष्टीकरण करने के लिए 'प्रस्ताविक' और उपसंहार जोड़ दिये हैं, पर उनके बिना भी नाटक अपने-आपमें पूर्ण है।

अन्त में, जो इस नाटक के सृजन के कारण हैं, उन सबका मैं आभारी हूं, विशेषकर आकाशवाणी के अधिकारियों का। भाई चिरंजीत ने कृपा-पूर्वक जो गीत लिख दिये हैं, उनके बिना तो नाटक का रस खंडित हो जाता। उनका मैं बहुत ही कृतज्ञ हूं। मैं उन विद्वानों और कलाकारों का भी आभारी हूं, जिनके परिश्रम से संचित सामग्री का मैंने लाभ उठाया है।

तेरहवां संस्करण

मुझे प्रसन्नता है कि पुस्तक का तेरहवां संस्करण निकल रहा है। मेरे लिए यह बड़े सौभाग्य की बात थी कि १९५६ में जब तथागत बुद्ध की २५००वीं जयंती सारे विश्व में मनाई गई, उस समय इस पुस्तक का दूसरा संस्करण निकला। रंगमंच की दृष्टि से उसमें मैंने कुछ संशोधन कर दिये थे और बाद के संस्करण में रंगमंच से संबन्धित कुछ सूचनाएं दे दी थीं।

शांति की आवश्यकता पर इन वर्षों में जितना जोर दिया गया है उतना पहले शायद ही कभी दिया गया हो। सचमुच भावी युद्ध की सर्व-नाशिनी कल्पना से कम्पित विश्व अशोक के चरित्र को जितना आज समझ सकता है, उतना सम्भवतः और कभी नहीं।

—विष्णु प्रभाकर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पात्र

अशोक	: भारत-सम्राट्
राधागुप्त	: अशोक का महामात्य
महेन्द्र	: अशोक का छोटा भाई
कुमार	: कलिंग के युवराज
उपगुप्त	: बौद्ध भिक्षु
चंडगिरि	: बंदीगृह का घातक
भिक्षु	: छद्मवेशधारी गुप्तचर बंधुजीव
प्रतिहारी	: द्वारपाल
संघमित्रा	: अशोक की छोटी बहिन
कारुवाकी	: अशोक की छोटी रानी
रेवा	: गायिका
भिक्षुणी	: कलिंग की राजकुमारी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समय

कलिंग-युद्ध की अन्तिम रात, ईसा से २६५ वर्ष पूर्व का भारत।

स्थान

कलिंग की राजधानी तोसली (वर्तमान धौली, जि० पुरी) के पास युद्ध-भूमि।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नव-प्रभात

प्रास्ताविक

(रंगमंच पर अस्तगामी सूर्य की लालिमा के कारण प्रकाश मंद पड़ता जा रहा है। आनेवाली मृत्यु की तरह अंधकार जैसे उसे ग्रसता आता है। दूर पृष्ठभूमि में सैन्य शिविर से मानो शोणित के बादल उठकर आकाश में छा गये हैं। कभी अग्नि की लपटें ऐसे धुँआ फेंकती जान पड़ती हैं जैसे महानाश आकाश को निगल जाना चाहता हो। कभी पंख फड़फड़ाते हुए गिद्ध[1] एक भयंकर अपशकुन की तरह निकल जाते हैं। गिरोह से अलग हुआ कोई गीदड़[2] चोर की तरह सूँघता हुआ आता है और चला जाता है। वातावरण में न कोलाहल है न उत्तेजना, पर शांति भी नहीं है; केवल भयानक मौन है जैसे किसीने चीत्कार का गला घोंट दिया हो। जैसे महानाश की लीला देखकर शांति की देवी दुःस्वप्न देखती-देखती संज्ञाहीन हो गई हो। मरदा उठने के

१-२ साधारणतया गिद्ध और गीदड़ का रंगमंच पर आना संभव नहीं है, इसलिए इसे छोड़ा जा सकता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुछ क्षण बाद धीरे-धीरे वीणा के स्वर उस मनहूस मौन को भंग करते हुए पास आते हैं। पर उस संगीत में आनन्द का उद्रेक नहीं है, वेदना की टीस है, जैसे वह संगीत नहीं, कराहती हुई मानवता की आवाज है। वह स्वर जैसे-जैसे पास आता है, हृदय में भय, आशंका, विषाद और संहार के बादल सांप की तरह गेंडुली मारकर बैठ जाते हैं। शूल चुभने लगते हैं। तम उसे जकड़ लेता है। तभी गाते-गाते गायिका मंच पर आती है। वह युवती है, सुन्दरी है, पर उसके मुख पर इतनी गहरी वेदना है, उसके बड़े-बड़े नेत्रों में निराशा का इतना गहरा अंधकार है कि देखकर भय लगता है। उसका जूड़ा ढीला हो गया है, जिसके कारण बकुल-माला लटक गई है। उसके अधोवस्त्र को कसे हुए करधनी भी कुछ नीचे सरक गई है, परन्तु उसे किसी बात का ध्यान नहीं है। वह दूर रक्तिम क्षितिज को देखती हुई करुण विषाद-भरे स्वर में गा रही है। उसकी कोमल और लंबी अंगुलियां जब वीणा के तार को झन झनाती हैं, तो मानो प्रलय चीत्कार कर उठता है।)

गीत

मां, तेरे आंगन में जलती महानाश की ज्वाला !
अस्ताचल पर रक्तिम लपटें लप-लप लपक रही हैं,
चिता-धूम के बाल बखेरे उतर रहा तम काला !
ये सड़ते शव, जलते खँडहर, रक्तिम रोती राहें !
रणचंडी की तृषा अपरिमित, भर-भर रीता प्याला !

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मां, आहों से नहीं पिघलता वज्र-हृदय हिंसा का,
तेरे दृग-जल से न बुझेगी यह ज्वाला विकराला !
राख चिताओं की उड़-उड़कर पूछ रही सुरपुर से,
"कहां भगीरथ-सा जन, जीवन-गंगा लानेवाला ?"
मां, तेरे आंगन में जलती महानाश की ज्वाला !

(गाते-गाते वह इतनी तन्मय, इतनी आत्म-विभोर हो उठती है कि सुध-बुध खो जाती है। सुननेवालों के हृदय वेदना और महानाश के भय से और भी धुक-धुक करने लगते हैं। इसी समय रंगमंच पर एक दूसरी नारी प्रवेश करती है। वह संघमित्रा है। अभी युवती है। उसने सैनिक का परिधान पहना है। जूड़ा कसकर बांधने से उसके मुख की मुद्रा कसी हुई कमान की तरह हो गई है। कमर में फेंटा कसे वह किसी वीर से कम नहीं दिखाई देती। पर इस समय वह उद्विग्न है। आते ही वह करुण स्वर में पुकारती है।)

संघमित्रा : रेवा ! रेवा !!

(गायिका सहसा कांप उठती है)

रेवा : कौन ! (देखकर) देवी ! (झुककर) मैं देवी को प्रणाम करती हूं।

संघमित्रा : हुआ रेवा ! पर तुम यह क्या कह रही हो ? अपनी प्रफुल्लित वाणी को वेदना की टीसों से क्यों भरे दे रही हो? महानाश करने के लिए शस्त्र ही क्या कम हैं, जो तुम संगीत की चेतना को भी उसकी दासी बनाये दे रही हो।

रेवा : देवी ! महानाश की इस बेला में केवल शैतान ही प्रसन्नता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

में नाच रहा है, केवल गिद्ध और गीदड़ ही आनन्द का संगीत अलाप रहे हैं। शेष सब मरण की दानवी लीला है। नीचे धरती पर लक्ष-लक्ष भाग्यहीन नारियों के नेत्रों से बहनेवाली वेदना में असंख्य मानवों के क्षत-विक्षत शव तैरते हैं। ऊपर आकाश में उनकी प्रेतात्माएं, स्वर्ग में स्थान कम पड़ जाने के कारण, सूर्य का प्रकाश ही नहीं रोकतीं, बल्कि फिर से अपने शत्रुओं पर आक्रमण कर रही हैं और इस बीभत्स लीला को मनुष्य कहता है—विजय! सभ्यता और संस्कृति की विजय! (मुड़कर) देवी! क्या आप ऐसी परिस्थिति में संगीत से आहों की अग्नि के अतिरिक्त प्रेम की शीतलता की आशा करती हैं? मृत्यु के अतिरिक्त जीवन का संदेश सुनना चाहती हैं?

संघमित्रा : (पास जाकर उसके कन्धे को थपथपाती है) शांत रेवा, शांत! जो कुछ है, वह मैं भी देख रही हूं। मनुष्य आज पागल हो गया है, लेकिन वह इतना अधिक पागल हो गया है कि इस महानाश के सूत्रधार स्वयं सम्राट् उद्विग्न हो उठे हैं। उन्हें शंका होने लगी है कि यह कलिंग की पराजय है या उनकी हार—यह क्रांति का रक्त है अथवा महानाश का शोणित!

रेवा : (चकित-सी) देवी!

संघमित्रा : मैं ठीक कह रही हूं, रेवा! सम्राट् को शंका होने लगी है।

रेवा : (चकित-सी) सम्राट् को शंका होने लगी है?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संघमित्रा : ऐसा ही जान पड़ता है, रेवा ! पिछले चार-पांच दिनों से उनके स्वभाव में मैं एक अद्भुत परिवर्तन देख रही हूं। जब-जब वह रणभूमि या बंदीगृह से लौटते हैं तब-तब ऐसा लगता है कि जैसे उनके प्राण झुलस रहे हैं।

रेवा : देवी ! यह तो मैंने भी अनुभव किया है (गंभीर स्वर) इधर मधुर मादक संगीत सुनते-सुनते वह चौंक पड़ते हैं। अपने हाथों को उलट-पलटकर देखने लगते हैं।

संघमित्रा : यही रेवा, यही शंका का जन्म है। रक्त-प्लावित युद्धभूमि और जीवित मानवों की कराहों से गूंजते हुए बंदीगृह से लौटकर जब वह तुम्हारी तापहारी मधुर वाणी सुनते हैं, तो उन्हें विश्वास नहीं आता कि इस नरक में यह सुख कहां से आ गया।

रेवा : (सोचती हुई) देवी की आखें बहुत दूर तक देख लेती हैं।

संघमित्रा : (मुस्कराती हुई) अच्छा रेवा ! आज क्या तुम सम्राट् के पास नहीं गईं ?

रेवा : नहीं देवी ! सुना है कि वह आज किसी गंभीर मंत्रणा में लगे हुए हैं।

संघमित्रा : समझी ! कलिंग के राजकुमार अभी नहीं पकड़े गये हैं। उसीकी चिंता है।

रेवा : देवी ! अब तो तोसली में आदमी दिखाई ही नहीं देते। कुमार न जाने कहां जा छिपे हैं ? सुना है कि कलिंग उन्होंने अद्भुत पराक्रम दिखाया था। उनकी हाथी-सेना की मार से मगध-सेना त्राहि-त्राहि कर उठी थी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संघमित्रा : (खोई-खोई) हां, रेवा! देखा तो मैंने भी था, पर उससे क्या! युद्ध अब भी हो रहा है। वह देखो, आकाश में गिद्ध कैसे मंडरा रहे हैं? दूर वह प्रकाश भी तेज हो चला है। अंधेरे को दूर करने के लिए किसीने फिर आग जलाई है। (निःश्वास) संसार समाप्त हो जायगा, पर यह युद्ध समाप्त नहीं होगा।

रेवा : सच देवी! यह युद्ध समाप्त नहीं होगा। मनुष्य की दानवी लिप्सा उसे समाप्त नहीं होने देगी। परन्तु देवी! मरने के लिए मनुष्य इतने प्रयत्न करता है, जीने के लिए भी कुछ करे, तो क्या संसार का कुछ अहित होगा?

संघमित्रा : (मुस्कराती है) रेवा, तुम गातीं ही नहीं, सोचती भी हो। पर कुछ गलत सोचती हो। वे सारे प्रयत्न मनुष्य जीने के लिए ही तो करता है। हां, यह दूसरी बात है कि वह यह सब अपने जीने के लिए करता है। तुम जिस कल्याण की बात कहती हो, वह तभी होगा जब मनुष्य दूसरों के लिए जियेगा (एकदम) पर, पर... वह कौन है?

(संघमित्रा एक ओर संकेत करती है, रेवा भी उधर ही देखती है।)

रेवा : कौन!, ओह, वह तो महामात्य हैं।

संघमित्रा : महामात्य राधागुप्त! वह कितनी शीघ्रता से सम्राट् के शिविर की ओर जा रहे हैं; अवश्य कोई बात है। वह सुनो, वह जय-घोष भी उठ रहा है!

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(दूर जय-घोष उठता है। उठता रहता है।)

स्वरघोष : मगध-सम्राट् की जय ! सम्राट् अशोक की जय !

रेवा : शावद कुमार पकड़ लिये गए हैं।

संघमित्रा : (सहसा कांपकर) कुमार पकड़ लिये गए हैं? क्या सच, कुमार पकड़ लिये गए? चलो, रेवा ! चलो ! महामात्य से पूछें कि क्या सच ही कुमार पकड़ लिये गए हैं?

(बोलती-बोलती इतनी शीघ्रता से रंगमंच से बाहर जाती है कि रेवा चकित रह जाती है और उसे पुकारती हुई पीछे-पीछे दौड़ती है।)

रेवा : देवि...देवि... (सहसा रुक जाती है) कुमार के पकड़े जाने की बात सुनकर देवी संघमित्रा कितनी उद्वेलित हो उठी हैं। शत्रु हो जाने पर भी कुमार के प्रति उनका प्रेम कम नहीं हुआ है। (निःश्वास) प्रेम भी कितना अद्भुत, कितनी पवित्र भावना है। सब लोग प्रेम ही क्यों नहीं करने लगते? (एकदम देखकर) ओह ! कुमारी कैसे भागी जा रही हैं? चलूं, मैं भी देखूं...

(वह भी जाती है और क्षणिक सन्नाटे के बाद लघु यवनिका गिर जाती है।)

रंगमंच पर प्रस्तुत करते हुए समय की कमी हो तो 'प्रास्ताविक' को छोड़ा जा सकता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पहला अंक

(सम्राट् अशोक अपने शिविर में इधर-उधर घूम रहे हैं। वहां की सजावट में राजसी वैभव की पूरी छाप है। भूमि पर बहुमूल्य कालीन और गलीचे बिछे हैं। यथास्थान मखमली आवरण से वेष्टित तोषक भी रखे हैं। एक ओर सम्राट् के बैठने का ऊंचा आसान है। इधर-उधर धूपदान रक्खे हैं, जिनसे उठकर सुगंधित धुआं वातावरण को किंचित् धूमिल बना रहा है। द्वार के पास और पीछे की ओर अनेक मुख-वाले पीतल-सोत रखे हैं, जिनमें दीपक जल रहे हैं। पृष्ठ-भूमि में सांध्यगीत की ध्वनि उठती है। वहां कोई नहीं है। परदा उठने पर सम्राट् घूमते दिखाई देते हैं। वह कुछ उद्विग्न हैं। वह सुन्दर नहीं हैं, परन्तु उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली है। विशाल वक्षस्थल, आजानुबाहु, प्रशस्त ललाट और बड़े-बड़े नेत्र, सब विश्वास से भरनेवाले हैं, परन्तु इस समय वह बहुत उद्विग्न हैं। उनके रत्नजड़ित आभूषण, उनका रेशमी उत्तरीय, सब उनकी दीनता को गहरा करते हैं। वह कुछ बोल रहे हैं, सहसा कहीं आहट होती है, वह चौंक पड़ते हैं।)

अशोक : (चीत्कार) कौन ? (कोई उत्तर नहीं) कोई नहीं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कोई तो था! (देखकर) ओह छाया थी, मेरी छाया, मैं समझा—कोई सैनिक है...

(स्वर अस्फुट होते हैं। एक दीर्घ निःश्वास लेकर वह फिर बोलते हैं।)

सब समाप्त हो गया! सब...कलिंग का दर्प चूर हो गया...एक लाख आदमी मर गये...ठीक हुआ...ठीक हुआ न, युद्ध में आदमी मरते ही हैं...

(उसी समय राधागुप्त शीघ्रता से प्रवेश करते हैं और झुककर अभिवादन करते हैं।)

राधागुप्त : सम्राट् की जय हो! कलिंग के राजकुमार बंदी हो चुके हैं।

अशोक : (चौंककर) कलिंग के राजकुमार बंदी हो चुके हैं?

राधागुप्त : हां सम्राट्!

अशोक : सच कहते हो, महामात्य?

राधागुप्त : आज्ञा हो, तो राजकुमार को सम्राट् के चरणों में उपस्थित किया जाय।

अशोक : (अनमना-सा) अभी ठहरो! पहले मुझे यह बताओ कि क्या अब युद्ध की आवश्यकता नहीं रही?

राधागुप्त : हां देव, कलिंग-विजय पूर्ण हुई।

अशोक : (उसी तरह) हां देव, कलिंग-विजय पूर्ण हुई। युद्ध समाप्त हो गया। अब शस्त्रों की झंकार सुनने को नहीं मिलेगी। अब आहतों की चीत्कार बंद हो जायगी।

राधागुप्त : देव! अब कलिंग में कौन बचा, जो शस्त्रों की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

झंकार सुनेगा ? जो वृद्ध, वनिताएं या बालक वहां शेष हैं वे न सुन सकते हैं और न बोल सकते हैं। वे केवल अपलक-दृष्टि शून्य में ताकते रहते हैं। उनसे बातें करने पर वे कुछ इस प्रकार देखते हैं कि बोलनेवाला स्वयं पानी-पानी हो जाता है। हां, केवल एक व्यक्ति है, जो देखता भी है और बोलता भी है।

अशोक : वह क्या बोलता है ?

राधागुप्त : यह तो मैं नहीं बता सकूंगा, देव !

अशोक : (सहसा तेज होकर) महामात्य ! जानते हो, तुम किससे बात कर रहे हो ?

राधागुप्त : जानता हूं, भारत-सम्राट् !

अशोक : तब !

राधागुप्त : सम्राट् चाहें, तो वह बात स्वयं उसीके मुंह से सुन सकते हैं।

अशोक : तो तुम उस वाचाल को पकड़ लाये हो ?

राधागुप्त : मैंने अभी निवेदन किया था, देव ! कलिंग के राजकुमार बंदी हो चुके हैं।

अशोक : कलिंग का राजकुमार ! कुमार बंदी होकर भी बोलना जानते हैं ?

राधागुप्त : तबसे वह कुछ अधिक बोलने लगे हैं, सम्राट् !

अशोक : (होंठ दबाकर) वह शायद भारत-सम्राट् चंडाशोक के स्वभाव को नहीं जानते।

राधागुप्त : देव ! कुमार मगध में हमारे अतिथि रहे हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सम्राट् उनकी वीरता से परिचित हैं। आखेट के समय उनके हस्तलाघव की सम्राट् ने भूरि-भूरि प्रशंसा की थी और देवी संघमित्रा...

अशोक : (जोर से) महामात्य !

राधागुप्त : अपराध क्षमा हो, देव ! देवी संघमित्रा आज भी कुमार की प्रशंसक हैं। अभी-अभी उनके बंदी हो जाने का समाचार सुनकर उन्होंने कहा था...

अशोक : (खोया सा)...क्या कहा था ?

राधागुप्त : उन्होंने कहा था कि कुमार के साथ वही व्यवहार होना चाहिए, जो एक वीर पुरुष के साथ होता है।

अशोक : (संभलकर) महामात्य ! हमें देवी संघमित्रा के परामर्श की आवश्यकता नहीं है। हम जानते हैं कि हमें कब क्या करना होगा। कुमार हमारा शत्रु है और संघमित्रा जानती है कि शत्रु के साथ कैसा व्यवहार किया जाता है। तुम बंदी को उपस्थित करो; हम उसकी बातें सुनेंगे।

राधागुप्त : जो आज्ञा, देव !

(राधागुप्त का गमन और रणवेश में संघमित्रा का प्रवेश)

संघमित्रा : भैया !

अशोक : कौन, संघमित्रा ! तुम इस समय यहां क्यों आईं ?

संघमित्रा : सम्राट् से निवेदन करने कि गायिका आ गई है। आज्ञा हो, तो उपस्थित करूं।

अशोक : इस समय नहीं, संघमित्रा! मुझे कुछ आवश्यक काम है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संघमित्रा : क्या मैं जान सकती हूं कि सम्राट् को इस संध्या-काल में क्या काम है ?

अशोक : तुम काम जानना चाहती हो (एकदम)...नहीं संघमित्रा, मैं तुम्हें कुछ नहीं बता सकूंगा ।

संघमित्रा : (हँसकर) बताने की कोई आवश्यकता नहीं, सम्राट्, मैं जानती हूं...

अशोक : तुम क्या जानती हो ?

संघमित्रा : यही कि आप कलिंग-कुमार के भाग्य का निर्णय करने जा रहे हैं । मैं आपसे केवल इतना निवेदन करूंगी कि आज आपके शौर्य की परीक्षा है ।

अशोक : भारत-सम्राट् का शौर्य विश्व-विदित है । कुमार को मेरे चरणों में सिर झुकाना ही होगा ।

संघमित्रा : और न झुकाया तो ?

अशोक : तो यह तलवार उसे झुका लेगी ।

(तलवार को म्यान में बजाता है ।)

संघमित्रा : (कांपकर) भैया !

अशोक : (हँसकर) कांप गई ! क्या तुम्हें शस्त्रों से डर लगने लगा है ?

संघमित्रा : नहीं, मैं शस्त्रों से नहीं डरती, सम्राट् !

अशोक : तो कुमार की मृत्यु से डरती हो ?

संघमित्रा : नहीं सम्राट्, मुझे उसकी चिन्ता नहीं है ।

अशोक : तो फिर किस बात की चिन्ता है ?

संघमित्रा : मुझे सम्राट् की चिंता है । गलती से वह तलवार को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शौर्य का प्रतीक समझ बैठे हैं।

अशोक : तलवार नहीं तो शौर्य का अर्थ क्या है?

संघमित्रा : हृदय! हृदय की विशालता और उदारता का नाम शौर्य है, सम्राट्।

अशोक : हृदय की विशालता और उदारता... (सहसा अट्ट-हास) हृदय की विशालता और उदारता! जान पड़ता है कि कलिंग के उस भिक्षु का प्रभाव तुम पर भी पड़ा है, संघमित्रा! आखिर तुम नारी हो और नारी की अवरोध-शक्ति बड़ी दुर्बल होती है। लेकिन याद रक्खो, अशोक बौद्धों की इस दुर्बल नीति के बल पर भारत का सम्राट् नहीं बना है।

संघमित्रा : लेकिन सम्राट्...

(किसी के आने का स्वर)

अशोक : (शीघ्रता से) तुम अब जा सकती हो, संघमित्रा।

संघमित्रा : भैया!

अशोक : जाओ संघमित्रा! भारत-सम्राट् अशोक तुम्हें जाने की आज्ञा देता है।

संघमित्रा : (जाती हुई) जा रही हूं, सम्राट्। पर भूलिये नहीं कि हृदय की विशालता का नाम ही शौर्य है।

(जाती है)

अशोक : (स्वागत) हृदय की विशालता का नाम शौर्य है। संघमित्रा! मैं जानता हूं कि तुम क्या कहना चाहती हो? तुम कलिंग के युवराज से प्रेम करती हो। तुम मुझे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धोखा नहीं दे सकतीं। पर युवराज मेरा शत्रु है और तुम मेरी बहिन !

(राधागुप्त का कलिंग-कुमार के साथ प्रवेश। कुमार दोनों सैनिकों के बीच में हैं। अंदर आते ही वह कुछ हटकर खड़े हो जाते हैं। कुमार रण-वेश में हैं। प्रशस्त ललाट, उन्नत वक्षस्थल, किंचित श्यामल वर्ण, अदम्य विश्वास से पूर्ण नयन और आजानुबाहु—एक साथ रक्षा और दण्ड के प्रतीक। उन्हें देखकर आंखें पलक मारना भूल जाती हैं।)

राधागुप्त : सम्राट् की जय हो ! कलिंग के राजकुमार उपस्थित हैं।

अशोक : (कठोर स्वर में) महामात्य, कलिंग का अब कोई राजकुमार नहीं है। वह एक साधारण बंदी है।

कुमार : अशोक ! अपनी वास्तविक अवस्था में सभी साधारण होते हैं। तुम भी अशोक पहले हो, सम्राट पीछे।

अशोक : (कड़ककर) बंदी, जानते हो, तुम किससे बातें कर रहे हो ?

कुमार : जानता क्यों नहीं ? मैं मगध के हत्यारे सम्राट् चंडाशोक से बातें कर रहा हूं, उस चंडाशोक से जिसने मां वसुंधरा को अपने लाखों पत्रों का रक्त पीने के लिए विवश किया है।

अशोक : (क्रुद्ध) बंदी, कलिंग के लोगों की तरह तुम वाचाल ही नहीं, धृष्ट भी हो। इस असभ्यता का एक ही प्रतिकार

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मेरे पास है और वह है कटार।

(कटार दिखाता है)

कुमार : हत्यारे के पास कटार के अतिरिक्त और भी कुछ होता है क्या ?

अशोक : बंदी ! मैं अभी तुम्हारा सिर काट सकता हूं।

कुमार : जो धरती माता अपने लाखों पुत्रों का रक्त पी चुकी है, वह अपने एक और पुत्र का रक्त पीयेगी, तो कोई अंतर नहीं पड़ेगा।

राधागुप्त : धृष्टता की भी एक सीमा होती है, कुमार ! होश में आकर बातें करो।

कुमार : तुम्हें भी क्रोध आ गया, महामात्य ! आखिर हो तो विष्णुगुप्त चाणक्य के शिष्य। लेकिन सुन लो, राधागुप्त, तुम्हारे इस हत्यारे सम्राट् को एक दिन इस रक्त-प्लावन का बदला चुकाना होगा। उसका अपना ही हृदय उसकी भर्त्सना करेगा।

अशोक : (अट्टहास) वही उपगुप्त का स्वर, वही बौद्ध भिक्षु की वाणी ! बौद्धों की दुर्बल नीति के कारण ही तुम्हारा पतन हुआ है, बंदी !

कुमार : मेरा पतन नहीं हुआ, अशोक ! पतन तुम्हारा हुआ है।

अशोक : मेरा पतन ! भारत-सम्राट् का पतन ! असंभव ! बंदी, असम्भव···

कुमार : असंभव नहीं, अशोक ! वह पूरी तरह संभव हो चुका है। लाखों मानवों का रक्त तुम्हारे पतन की घोषणा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर रहा है। लाखों घायलों की कराह में तुम्हारे पतन का स्वर गूंज रहा है। ललनाओं की सूनी मांगों में, माताओं की खाली गोदियों में, शिशुओं की निरीह दृष्टि में, सब कहीं तुम्हारे पतन की कहानी अंकित है। कलिंग के उजड़े हुए ग्राम, वीरान प्रदेश, ये सब तुम्हारे पतन के साक्षी हैं। अशोक, तुम जीतकर भी हार गये हो, कलिंग मिटकर भी अमर हो गया है!

अशोक : अशोक हार गया है, कलिंग अमर हो गया है!

(अट्टहास)

कुमार : हँस लो, जितना हँस सको, हँस लो। मगर कलिंग में तुम्हें यह हँसी नहीं मिलेगी। वहां के मार्ग रक्त से रंगे पड़े हैं। वहां सिंहासन के चारों ओर लाशों के ढेर लगे हुए हैं। वहां बंदीघरों से उठती हुई बंदियों की कराह ने सारे वातावरण को विषाक्त बना दिया है। अशोक, तुमने कलिंग की धरती को जीता है, आत्मा को नहीं। धरती की जीत को तुम जीत कहते हो?

राधागुप्त : जीत नहीं तो और क्या है! आत्मा को किसने देखा है? शरीर सत्य है, उसीकी जय सच्ची जय है। कुमार, तुम्हारे इस शब्द-जाल से तुम्हारी पराजय जय में नहीं पलट सकती।

कुमार : मेरी पराजय! मुझे किसने पराजित किया है?

राधागुप्त : भारत-सम्राट् महाराज अशोक ने।

कुमार : राधागुप्त! जिस कलिंग को सोलह राज्यों को उखाड़

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

फेंकनेवाला तुम्हारा गुरु चाणक्य पराजित नहीं कर सका, जिसने सदा तुम्हारी सत्ता को चुनौती दी है, उसे कोई भी कभी भी पराजित नहीं कर सकता। राधागुप्त ! कलिंग के राजकुमार के शरीर में जबतक प्राण हैं तबतक उसे कोई पराजित नहीं कर सकता।

अशोक : (तेजी से) बंदी ! तुम मुझे प्रणाम नहीं करोगे ?

कुमार : कलिंग का राजकुमार कलिंग के अतिरिक्त और किसी सिंहासन के सामने झुकना नहीं जानता।

अशोक : लेकिन कलिंग का सिंहासन धूल में मिल चुका है। कलिंग का स्वामी मैं हूं।

(राधागुप्त भी आवेश में आता है)

कुमार : कलिंग के युवराज के रहते कलिंग का स्वामी कोई नहीं हो सकता, अशोक।

अशोक : होने का प्रश्न नहीं है। कलिंग का राजमुकुट मेरी ठोकरों में लोट रहा है।

कुमार : ठोकर लगाना तो दूर की बात है, उसकी ओर दृष्टि उठानेवाले की आंखें निकाल ली जाती हैं, अशोक।

राधागुप्त : बस करो, बंदी, नहीं तो...

कुमार : नहीं तो तुम्हारा सिर काट लिया जायगा। (अट्टहास) तुम लोगों में सिर काट लेने से अधिक कुछ करने की शक्ति है ही कहां ? तुम कायर हो। और कायर कभी किसीको पराजित नहीं कर सकते।

अशोक : महामात्य ! बंदी से कहो कि वह व्यर्थ की वितंडा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाद में उठाकर मेरी अधीनता स्वीकार करे। अशोक वीर पुरुषों को क्षमा करना जानता है।

(राधागुप्त बोलने को होता है पर कुमार अवसर नहीं देता)

कुमार : लेकिन वीर पुरुष किसीकी क्षमा ग्रहण करना नहीं जानते ! विश्वास रखो, कलिंग का राजकुमार जीते-जी वीरता को कलंकित नहीं करेगा।

(अशोक तिलमलाता है)

अशोक : महामात्य, बंदी से पूछो कि क्या यह उसका अन्तिम निर्णय है ?

कुमार : वीर पुरुष दो बार नहीं सोचा करते।

अशोक : तब, महामात्य ! बंदी को ले जाओ और चंडगिरि से कह दो कि उषा की प्रथम किरण के साथ इसका सिर मेरे चरणों में लोटेगा।

राधागुप्त : अवश्य ! सम्राट की आज्ञा का पालन होगा, देव !

कुमार : बस ! यही है तुम्हारी वीरता ? यही है तुम्हारा शौर्य ? इसी बल पर सम्राट् बने हो ? एक बंदी का सिर भी नहीं झुका सके : खोपड़ियां ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं, लेकिन वह वीर पुरुषों का मार्ग नहीं है।

(सहसा अशोक गरदन उठाकर कुमार को देखता है, देखता रह जाता है।)

राधागुप्त : बस कुमार, सम्राट् को उपदेश देने की धृष्टता मत करो। सैनिक, बंदी को ले चलो।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुमार : सैनिक मुझे क्या ले चलेंगे ! मैं स्वयं चल रहा हूं। महामात्य ! आओ।

(कुमार दृढ़ता से जाता है। पीछे-पीछे राधागुप्त हैं। अशोक स्तब्ध-मौन कुछ क्षण उन्हें जाते देखता रहता है। फिर अचानक बोल उठता है।)

अशोक : (स्वगत) कलिंग के लोग कितने रूखे, कितने असभ्य होते हैं। बातें करना तक नहीं जानते। सबकुछ नष्ट हो गया है, पर घमंड उसी तरह बना हुआ है। रस्सी जल गई है, पर ऐंठन शेष है। जैसे-जैसे मौत पास आती है, वैसे-वैसे दृढ़ता बढ़ती है। साहस सिर उठाता है। (हँसकर) लेकिन अशोक को किसने जीता है ! अशोक के क्रोध से कौन बच सका है ! कौन नहीं जानता अशोक के बल-पराक्रम को ! लेकिन, लेकिन वह राजकुमार कैसे ऐंठकर कहता था— एक धेंदो का सिर नहीं झुका सके, खोपड़ियां ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं...नहीं...नहीं। यह सब उसका शब्द-जाल था। पराजय की खीझ उतारने का उपक्रम था। लेकिन (सहसा उद्विग्न होता है) लेकिन आहतों का चीत्कार...बंदियों की करुण पुकार...पीड़ित नागरिकों का हाहाकार...उफ ! (हृदय दबाता है) अचानक यह क्या हुआ ! हृदय में यह कैसी पीड़ा होती है ! नेत्र क्यों मुंदे जाते हैं ! (लड़खड़ाता है) ओह ! यह क्यों होने लगा...यह मुझे क्या होने लगा ! यह मुझे कौन पुकार रहा है ? कौन मेरी हँसी उड़ा रहा है ? कौन है ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(संघमित्रा का प्रवेश)

संघमित्रा : सम्राट की जय हो !

अशोक : (चौंककर) कौन ?

संघमित्रा : मैं ।

अशोक : संघमित्रा !

संघमित्रा : हां सम्राट ! कुमार के भाग्य का निर्णय कर चुके ?

अशोक : (संभलकर) तुम उस बंदी की बात कर रही हो ? अच्छा हुआ संघमित्रा, जो तुम्हारा विवाह उसके साथ नहीं हुआ। कलिंग के लोग बड़े धृष्ट होते हैं। मैं उसे क्षमा करने को तैयार था, परन्तु वह किसी भी प्रकार मेरी अधीनता स्वीकार करने को तैयार नहीं हुआ।

संघमित्रा : अधीनता स्वीकार करने को उसके पास रक्खा ही क्या है? सारा देश श्मशान बन चुका है। वह उर्वर भूमि अपने हर्षोत्फुल्ल निवासियों के शवों से भरी पड़ी है। उसके मार्गों पर हृष्ट-पुष्ट और बहुमूल्य हाथियों के अंग-अंग बिखरे पड़े हैं। कलिंग के वे सुन्दर वस्त्र, जिनको आप और हम सब चाव से मंगाकर पहना करते थे, चीर-चीर होकर हवा में उड़ रहे हैं। उफ...कितने लोग थे कलिंग में! मार्ग नहीं मिलता था, पर अब...

अशोक : (एकदम टोककर) तुम उसका देश देखने गई थीं, संघमित्रा !

संघमित्रा : जाना ही पड़ता है। जिस समय आपके शूरवीर सैनिक घरों से निकाल-निकालकर उन भोले, सरल और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

निरपराध कैलिंग-निवासियों का वध करते हैं, तो सम्राट्, महानाश का माथा भी शर्म से झुक जाता है !

अशोक : यह युद्ध है, संघमित्रा...और युद्ध में विरोधी का नाश ही किया जाता है।

संघमित्रा : जानती हूं, सम्राट्। मैं विरोध नहीं करती। केवल सम्राट् के सैनिकों के कर्म का बखान करती हूं।

अशोक : वे ठीक करते हैं। उन्हें यही आज्ञा है।

संघमित्रा : सम्राट् के सैनिक आज्ञाकारी हैं, यहांतक कि छोटे-छोटे बच्चों और औरतों को भी वे घरों में नहीं छोड़ते। उन्हें बाहर निकालकर घरों में आग लगा देते हैं। इसलिए कुमार ने गलती की जो श्मशान के लिए सिर दिया।

अशोक : तो तुम जानती हो कि मैंने बंदी का सिर काट लेने की आज्ञा दी है ?

संघमित्रा : जानती तो नहीं, पर कल्पना कर सकती हूं। बचपन से आपको पहचानती हूं। राजगद्दी भी तो आपने बड़े भैया सुसीम के सिर का सौदा करके जीती है। औरों की भांति विरासत में नहीं पाई। विरासत एक प्रकार का दान है और दान लेना वीरता का अपमान है !

अशोक : (छटपटाकर) गद्दी की तो यहां कोई चर्चा ही नहीं थी, संघमित्रा !

संघमित्रा : गद्दी तो गौण है, भैया। चर्चा आपके स्वभाव की है। कुमार को प्राणदंड देकर आपने राजसत्ता की ही नहीं,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपने स्वभाव की मर्यादा की भी रक्षा की है।

अशोक : (तेज स्वर) स्वभाव की मर्यादा! संघमित्रा, अशोक शक्ति में विश्वास रखता है। दया और करुणा को वह साम्राज्य का शत्रु मानता है। सुसीम पिता के राज्यकाल में भी तक्षशिला का विद्रोह नहीं शांत कर सका था। वह बौद्धों की दुर्बल नीति का पक्षपाती था। वह मानवता की पुकार-जैसी काल्पनिक भावनाओं में विश्वास करता था।

संघमित्रा : निःसंदेह, बड़े भैया सम्राट् होने के लिए नहीं थे। वही गद्दी पर बैठते तो मौर्यों की राज्य-पताका कैसे चारों दिशाओं में फहराती? देश कैसे 'विजित' होते? धरती माता कैसे अपनी संतान का रक्त पीती? अशोक कैसे मानव-चीत्कार का संगीत सुनता?

अशोक : तुम जानती हो कि चीत्कार में भी संगीत होता है।

संघमित्रा : होता है सम्राट्! उसको सुनकर तो मनुष्य जीवन से डरना सीखता है।

अशोक : (हँसकर) शब्दों का मायाजाल! वही शब्दों का मायाजाल! संघमित्रा, जो जीवन से डरेगा, वह जियेगा कैसे?

संघमित्रा : जैसे सम्राट् जीते हैं, जैसे सम्राट् के सैनिक जीते हैं।

अशोक : जैसे सम्राट् जीते हैं? यानी जैसे मैं जीता हूं?

संघमित्रा : हां सम्राट्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अशोक : संघमित्रा ! तुम भी उन बौद्धों से हेल-मेल बढ़ाने लगी हो। तभी यह रहस्यमयी भाषा बोलती हो। बंदी भी कुछ इसी प्रकार कहता था।

संघमित्रा : बंदी क्या कहता था, सम्राट् ?

अशोक : वह कहता था कि तुम कैसे वीर हो, जो एक बंदी का सिर भी नहीं झुका सके। खोपड़ियां ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं (खोखली हँसी) यह सब वाग्जाल है। भुजबल ही सबसे बड़ी शौर्य है। हृदय और आत्मा की बातें नारियों और भिक्षुओं के लिए हैं।

संघमित्रा : (हँसकर) धन्यवाद, भैया ! नारी को आपने भिक्षुओं के समकक्ष माना, लेकिन एक बात पूछूं, सम्राट्!

अशोक : पूछो, संघमित्रा ! (निःश्वास) बात पूछने को तो आज मेरा भी मन करता है।

संघमित्रा : आपका मन बात पूछने को करता है ?

अशोक : करता तो है।

संघमित्रा : तो फिर पूछिये न ! मैं तो सदा आपको तंग करती रहती हूं। आप क्या चाहते हैं, सम्राट् ?

अशोक : कुछ नहीं, संघमित्रा। कुछ नहीं, तुम पूछो।

संघमित्रा : (जोर देकर) आप ही पूछिये, सम्राट् !

अशोक : संघमित्रा !

संघमित्रा : आप कुछ पूछना चाहते हैं, सम्राट्। पूछिये।

अशोक : पूछूं ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संघमित्रा : अगर मुझे किसी योग्य समझते हों, तो पूछो।

अशोक : नहीं, यह बात नहीं है, संघमित्रा। मैं तुमसे एक बात पूछना चाहता हूं। मैं पूछना चाहता हूं कि क्या किसीका वध करने की कोई और रीति भी होती है ?

संघमित्रा : समझी नहीं, सम्राट्। और रीति से आपका क्या आशय है ?

अशोक : जिसका वध करना हो उसके प्राण न निकलें, पर वह मर जाय।

संघमित्रा : ऐसी रीति ! नहीं भैया, मैं तो ऐसी रीति नहीं जानती। शस्त्र बांधनेवाला कोई जानता भी न होगा।

अशोक : अच्छा तो जाने दो···लेकिन हां, संघमित्रा ! शस्त्र बांधनेवाला कायर होता है क्या ?

संघमित्रा : नहीं तो, आपको अचानक यह क्या होने लगा ? आप ऐसे प्रश्न क्यों पूछते हैं ?

अशोक : (कांपकर) न जाने···न जाने (दृढ़ होकर) नहीं-नहीं मुझे कुछ नहीं हुआ। ऐसे ही कुछ याद आ गया था। कोई बात नहीं है। बात यह है कि अब हम शीघ्र सिंहल-विजय के लिए चलेंगे।

संघमित्रा : सच ?

अशोक : हां।

संघमित्रा : मैं भी चलूंगी।

अशोक : अवश्य चलना। वह बहुत सुन्दर देश है।

संघमित्रा : और हम सौंदर्य के उपासक हैं; उसे चाट जाने-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाले ! (हँसकर) अच्छा मैं रेवा को बुला लाऊं। आप थक गये होंगे ?

अशोक : नहीं-नहीं, संघमित्रा ! मैं गाना सुनना नहीं चाहता। मैं अब कभी गाना नहीं सुनूंगा।

संघमित्रा : (सहसा रुककर) आप अब गाना नहीं सुनेंगे ? क्यों ? क्या हुआ ?

अशोक : कुछ नहीं, संघमित्रा ! हुआ तो कुछ नहीं लेकिन... लेकिन...।

संघमित्रा : लेकिन क्या...

अशोक : संघमित्रा ! जब रेवा गाती है, तो न जाने क्यों मुझे युद्ध-भूमि का दृश्य दिखाई देने लगता है। मैं तब उसके मादक संगीत में घायलों का चीत्कार सुनने लगता हूं। मेरे कानों में उस समय बन्दियों की करुण पुकार गूंज उठती है। (उत्तेजित हो जाता है) संघमित्रा···संघमित्रा ! युद्ध में इतने आदमी मरते क्यों हैं ? युद्ध होते क्यों हैं ?

संघमित्रा : भैया ! भैया ! यह आपको क्या हो गया है ? आप अस्वस्थ हैं। आपका मन दुःखी है। आपको संगीत की आवश्यकता है। मैं अभी रेवा को भेजती हूं।

(संघमित्रा का शीघ्रता से गमन)

अशोक : (उसी तरह अनमना-सा) क्यों इतने आदमी मरते हैं ? क्यों इतना रक्त बहता है, संघमित्रा ? बंदी कहता था कि मैंने धरती माता को उसके अपने बेटों का रक्त पीने को विवश किया है—अपने बेटों का रक्त ! कोई अपने बेटे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

का रक्त पीता है ? क्यों संघमित्रा? (जोर से) संघमित्रा !

(सिर उठाकर देखता है। कोई दिखाई नहीं देता।)

अशोक : गई। महामात्य कहते थे कि यह कलिंग के युवराज की बड़ी प्रशंसा कर रही थी। कुमार की प्रशंसा तो मैंने भी की थी। वह है भी अनुपम वीर। उस दिन आखेट में उसका हस्तलाघव देखा था। अब इस महानाश में उसका अदम्य साहस देखा। मैं चाहता तो उसी क्षण उसका सिर काट लेता। लेकिन...लेकिन ! साहसी मनुष्य को सामने पाकर मौत भी अपना काम भूल जाती है। उसका साहस भी अंगद के पैर के समान मेरे क्रोध के सामने डटा रहा। यही नहीं, उसने मुझे चुनौती दी—'बस, एक बंदी का सिर भी नहीं झुका सके...खोपड़ियां ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं।' मैं एक बन्दी का सिर नहीं झुका सका...एक बंदी का ! मैं, जिसके इंगित पर लक्ष-लक्ष सिर पैरों को चूमते हैं, जिसकी भृकुटी पर काल कांप उठता है, जिसके क्रोध की ज्वाला में विश्व भस्म हो सकता है, वह सिर नहीं झुका सका ? क्या सचमुच मैं इतना निर्बल हूं ? क्या मेरी शक्ति कायर की शक्ति है ! कायर ! हां, गीदड़ कायर ही होता है। कुमार ने मुझे गीदड़ कहा...खोपड़ी ठुकरानेवाला गीदड़ ! मैं खोपड़ी ठुकराता हूं... (गहरा उच्छ्वास) मैं खोपड़ी ठुकराता हूं, ठीक तो है। मैं उसका सिर नहीं झुका सका। संघमित्रा भी कहती थी कि शौर्य तलवार में नहीं होता...शायद वह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ठीक कहती है। तलवार में शौर्य नहीं होता। तभी तो मैं जीते-जी उसका सिर नहीं झुका सका। अब उसका सिर काटकर उससे बदला लेना चाहता हूं। सिर काट-कर...उसके सिर को ठुकराकर...गीदड़ भी निर्जीव सिर को ठुकराता है। मैं गीदड़ हूं...हां, मैं गीदड़ हूं। मैं एक बंदी का सिर नहीं झुका सका...

(राधागुप्त का प्रवेश)

अशोक : (चौंककर) कौन महामात्य ?

राधागुप्त : सम्राट् की जय हो, एक बौद्ध भिक्षु आपसे मिलना चाहते हैं।

अशोक : (नम्र स्वर में) बौद्ध भिक्षु को अभी रहने दो। मैं तुमसे पूछता हूं—कुमार यही कहता था न कि मैं एक बंदी का सिर नहीं झुका सका ?

राधागुप्त : देव ! बंदी का सिर अभी कुछ ही घंटों में आपके चरणों में लोटेगा।

अशोक : यही तो, वह यही तो कहता था ! खोपड़ियां ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं। गीदड़ कायर होते हैं, महामात्य ! कायर पुरुष को ही तो गीदड़ कहते हैं।

राधागुप्त : सम्राट्, आपका चित्त ठीक नहीं है। आज क्या कोई गायिका नहीं आई ? रेवा कहां है ?

अशोक : राधागुप्त, संघमित्रा कहती थी कि वीर पुरुष जिस संगीत को सुना करते हैं, वह घायलों के चीत्कार और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बंदियों की करुण पुकार से उठता है। लेकिन महामात्य, मैं तुमसे पूछ रहा था कि क्या मैं बंदी का सिर नहीं झुका सकता ? क्या उसका सिर काटना ही होगा ?

राधागुप्त : जो भारत-सम्राट् की आज्ञा नहीं मानता, उसका सिर काटा ही जाता है।

अशोक : लेकिन महामात्य! आज्ञा तो वह फिर भी नहीं मानेगा।

राधागुप्त : सम्राट! यदि वह आज्ञा मान लेता, तो उसे दंड दिया ही क्यों जाता ?

अशोक : दंड···दंड यही तो संघमित्रा कहती थी कि तलवार में शौर्य नहीं होता, वह हृदय में होता है। क्यों महामात्य ! तुम हृदय की शक्ति को जानते हो ?

राधागुप्त : हृदय की शक्ति को नहीं जानता, देव ! मैं शासन की शक्ति को जानता हूं और जानता हूं संगीत की शक्ति को। मैं अभी उसका प्रबन्ध करता हूं।...(जाता है, फिर रुकता है) ओह, मैं भूल गया, सम्राट्, द्वार पर एक भिक्षु खड़े हैं।

अशोक : भिक्षु मुझसे मिलने आये हैं, इस समय ?

राधागुप्त : सम्राट्, वह कलिंग-कुमार से भेंट करना चाहते हैं।

अशोक : किसलिए ?

राधागुप्त : शायद वह कुमार को···

अशोक : (रुककर) शायद वह कुमार को मेरी अधीनता स्वीकार करने के लिए राजी करना चाहते हैं (हँसकर) महामात्य, जो काम में नहीं कर सकता, उसे शस्त्र कर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सकते हैं, भिक्षु कर सकते हैं. यह कैसी विडंबना है? यह कैसी शक्ति है? मैं इतना दुर्बल हूं, फिर भी सम्राट् हूं। ...नहीं, नहीं महामात्य! मैं वह शक्ति चाहता हूं, जिसके द्वारा बंदी का सिर झुका सकूं। क्या वह शक्ति मुझे मिल सकती है?

(महेन्द्र का प्रवेश)

महेन्द्र : अवश्य मिल सकती है, सम्राट्! शर्त केवल इच्छा की है।

अशोक : कौन? महेन्द्र!

महेन्द्र : आज्ञा, सम्राट्!

अशोक : सम्राट्, सम्राट्! महेन्द्र, तुम भी मुझे सम्राट् कहोगे?

महेन्द्र : जो आज तक कहता आया हूं उसको अचानक बदल देने का कोई कारण दिखाई नहीं देता, सम्राट्!

अशोक : ठीक है, महेन्द्र। तुम ठीक कहते हो, परंतु तुम नहीं जानते, उस बंदी कुमार ने मुझसे कहा था कि सबसे पहले हम सब साधारण पुरुष हैं। मैं अशोक पहले हूं, सम्राट् पीछे।

महेन्द्र : (हँसकर) और सम्राट् ने उसकी बात मान ली?

अशोक : तब तो नहीं मानी थी, पर अब मुझे ऐसा लगता है कि जैसे मुझे कोई अशोक कहकर पुकारे।

महेन्द्र : (राधागुप्त की ओर मुड़कर) सम्राट् आज कुछ दीन दिखाई दे रहे हैं, महामात्य! ऐसा क्यों?

अशोक : महामात्य को कुछ पता नहीं। महेन्द्र, वह मेरी वाणी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है। सच पूछो तो मुझे भी कुछ पता नहीं। मुझे उस बंदी ने दया का पात्र बना दिया है। मेरा हृदय जल रहा है। मुझे लगता है कि जैसे मैं अकेला हूं, जैसे मैं एक दुर्बल प्राणी हूं।

महेन्द्र : भैया, यह तुम क्या कह रहे हो ?

अशोक : (भावावेश) भैया! महेन्द्र, एक बार फिर कहो तो 'भैया' !

महेन्द्र : भैया !

(सम्राट् अशोक आंखें मूंदते हैं।)

राधागुप्त : सम्राट्! भिक्षु के लिए क्या आज्ञा है ?

अशोक : (सहसा सँभलकर) ओह भिक्षु! उन्हें आने दो, लेकिन महामात्य, उनके आने से पहले मुझे यह बताओ कि क्या मैं कुमार के दंड पर फिर से विचार कर सकता हूं ?

राधागुप्त : सम्राट सबकुछ कर सकते हैं। परन्तु उन्हें अपने पद की मर्यादा को समझ लेना चाहिए।

अशोक : क्या कहा ? मुझे अपने पद की मर्यादा को समझ लेना चाहिए, महामात्य! मैं सम्राट् हूं, किसीका बन्दी नहीं।

(उपगुप्त का प्रवेश)

उपगुप्त : जबतक व्यक्ति अपने लिए जीता है, तबतक वह बंदी ही रहता है। आकांक्षा की परिधि सीमित है, परन्तु उसकी प्यास बड़ी भयंकर होती है, महाराज! मकड़ी के जाले के समान उसमें फंसकर कोई जीवित नहीं रहा है।

अशोक : भिक्षु उपगुप्त !...मैं आपको प्रणाम करता हूं भंते!

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपगुप्त : कल्याण हो ! कलिंग-कुमार से मिलना चाहता हूं।

अशोक : महामात्य ने मुझे अभी बतलाया था, लेकिन मुझे लगता है कि कुमार से अधिक मुझे आपकी मंत्रणा की आवश्यकता है !

उपगुप्त : आपको मेरी मंत्रणा की आवश्यकता है !

अशोक : हां, भंते !

उपगुप्त : पूछो, क्या जानना चाहते हो ?

अशोक : भंते ! क्या कोई ऐसी शक्ति है, जो बिना नाश किये विरोधी को पराजित कर सके।

उपगुप्त : किसीको पराजित करने की भावना ही मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता है, महाराज !

अशोक : (दोहराता हुआ) किसीको पराजित करने की भावना ही मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता है...किसीको पराजित करने की भावना ही मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता है !

(कई बार दोहराता है।)

उपगुप्त : सम्राट्, रात बीत रही है। क्या मैं...।

अशोक : (एकदम) रात बीत रही है। सच, क्या रात बीत रही है ? भंते ! आपने कितनी सुन्दर बात कही है। रात बीतती है तभी प्रभात होता है।

उपगुप्त : लेकिन आज का प्रभात किसीकी मृत्यु का संदेश लेकर आ रहा है, सम्राट् !

अशोक : आप कलिंग के युवराज की बात कर रहे हैं, भंते !

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वह मृत्यु और जीवन से परे है। मैं उसे दंड देने का साहस नहीं कर सकता। वह स्वतन्त्र है।

(सब स्तंभित होते हैं।)

राधागुप्त : सम्राट् क्या कहते हैं ? नहीं, यह नहीं हो सकता।

अशोक : सुनो महामात्य ! कलिंग-कुमार मुक्त ही नहीं हैं, वह अपने राज्य के स्वामी भी हैं।

राधागुप्त : सम्राट्...

महेन्द्र : (अचरज) भैया !

उपगुप्त : महाराज, मैं यह क्या सुन रहा हूं ?

अशोक : जो कुछ आप सुन रहे हैं, वह ठीक है। परंतु ऐसा क्यों हो रहा है, यह मैं स्वयं भी नहीं जानता। रह-रहकर कलिंग-कुमार की बातें मुझे याद आ रही हैं। रह-रहकर रणभूमि का चित्र मेरे नयनों में उभर आता है। मैं अब गीदड़ बनकर श्मशान में खोपड़ी नहीं ठुकराना चाहता। मैं मानव बनकर मानव को जीतना चाहता हूं। मैं कलिंग-कुमार को बताना चाहता हूं कि मैं मानव हूं। (शांत उच्छ्वसित स्वर) मैं भी मानव हूं। (राधागुप्त के अतिरिक्त सब स्तंभित, चकित, पर प्रसन्न मुद्रा में अशोक को देखते हैं।)

महेन्द्र : भैया ! आपने आज जो काम किया है, वह मानव ही कर सकते हैं। आपकी जय हो ! आइये आचार्य, हमें शीघ्र ही बंदी-गृह में जाकर कलिंग-कुमार को यह शुभ समाचार देना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

0152.2N12.1 L3

उपगुप्त : चलो महेन्द्र ! चलो।

(महेन्द्र और उपगुप्त का गमन)

अशोक : कलिंग-विजय अब हुआ है।

राधागुप्त : लेकिन सम्राट् ! यह क्या उचित हुआ ? शासन की मर्यादा इससे सुरक्षित रहेगी क्या...

अशोक : (हँसता हुआ) राधागुप्त ! इस समय मैं तुमसे विवाद करना नहीं चाहता। मैं स्वयं नहीं जानता कि यह उचित है अथवा अनुचित, परंतु मुझे लग रहा है कि मैं ऐसा न करता तो पागल हो जाता। अब मैं देवी कारुवाकी के शिविर में जा रहा हूं। संघमित्रा दिखाई दे तो वहां भेज देना। (गमन)

(राधागुप्त चिंतित अवस्था में क्षण-भर वहीं खड़े-खड़े अशोक को जाते देखते हैं, फिर वह भी तेजी से जाते हैं। धीरे-धीरे परदा गिर जाता है।)

श्री ... भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय ... वाराणसी
क्रमांक ... 1913
दिनांक ...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो अंक

(रानी कारुवाकी का शिविर। फर्श पर बहुमूल्य कालीन बिछे हैं। भित्तियों पर कलापूर्ण चित्र हैं। एक ओर एक चित्रपट पर अधूरा चित्र दिखाई देता है। उसके पास चौकी पर प्रसाधन भी हैं। कोनों में सुगंधित द्रव्यों के पात्र रक्खे हैं। एक ओर सुन्दर शय्या पर तोषकों के सहारे रानी कारुवाकी दाहिने हाथ पर मस्तक टिकाये लेटी हैं। उनकी वेणी वक्षःस्थल पर उरोजों के बीच आ गई है। करधनी का अग्रभाग शय्या पर लटक गया है। द्वार के पास जो बहुमुखी दीप जल रहा है, उसका कांपता हुआ प्रकाश उनके मुख पर धूप-छांव का खेल खेल रहा है। उनका वर्ण गौर है। श्यामवर्णी नयन किंचित लंबे हैं, जो इस समय कहीं दूर देख रहे हैं। हाथ के अग्रभाग तथा पैरों पर मेंहदी-जैसे पदार्थ से चित्रकारी की गई हैं। उनके सामने दीपक के पास एक आसन बिछा है, जिसपर वीणा लिये रेवा गा रही है। उसीको सुनती-सुनती वह तन्मय हो जाना चाहती हैं, पर रह-रहकर चौंक उठती हैं। रेवा के स्वर में माधुर्य है। पर इस समय उन्हें कुछ भी संतुष्ट करता नहीं जान पड़ता।)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गीत

नैन कमल की कारा में क्यों भौंरा जाग जाग रहा ?
क्यों भौंरा जाग रहा ?
अलस कमलिनी, मुकुलित पलकें,
उलझ रहीं सौरभ की अलकें,
मधु सपनों की कुंजगली में बरस विहाग रहा !
क्यों भौंरा जाग रहा ?
सखि, कितनी उन्मद मनुहारें,
ज्यों प्राणों को प्राण पुकारें,
चरणों में सर्वस्व समर्पित, अब क्या मांग रहा ?
क्यों भौंरा जाग रहा ?
मुंदे नयन, औ' चांद सितारे,
बुझे दीप धरती के सारे,
पंखुड़ियों के रंगमहल में जग अनुराग रहा ?
क्यों भौंरा जाग रहा ?

(सहसा कारुवाकी गीत समाप्त करने का इशारा करती है।)

कारुवाकी : बस करो, रेवा ! बस, अब बंद करो। ये राग और अनुराग की बातें अब अच्छी नहीं लगतीं।

(रेवा वीणा बजाना बंद करती है।)

रेवा : महारानी कुछ अस्वस्थ हैं। आज्ञा हो तो कोई और सरस गीत गाऊं।

कारुवाकी : नहीं रेवा, अब नहीं। तुम जितना सरस गीत

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गाती हो मन उतना ही विरस होता है। (निःश्वास) न जाने यह युद्ध कब समाप्त होगा ? मरे हुए लोगों की संख्या गिनते-गिनते ऐसा लगने लगा है कि जैसे हम सब मरे हुए हैं, क्योंकि उनके सामने जो जीते हैं उनकी तो कोई गिनती ही नहीं है।

रेवा : (मुस्कराकर) महारानी ! सुना है कि जब प्रत्येक नया व्यक्ति इस लोक में आता है तो विधाता उसे मृत्यु का दंड सुनाकर भेजते हैं।

कारुवाकी : (हँसकर) ओह, यह बात है। तभी तो इसे मृत्यु-लोक कहते हैं। मैं आज महाराज को धन्यवाद दूंगी कि वह इतने आदमियों का वध करवाकर विधाता का काम हल्का कर रहे हैं। (सहसा हँसी चिन्ता में बदल जाती है) पर...पर रेवा मुझे तो लगता है...

(उठकर खड़ी हो जाती है और वातायन से बाहर झांकती है।)

रेवा : आपको क्या लगता है, महारानी ?

(वह भी उठती है।)

कारुवाकी : यही कि विधाता का काम मनुष्य को नहीं करना चाहिए...युद्ध बंद होना चाहिए।

रेवा : कलिंग का युद्ध तो आज समाप्त हो गया, महारानी ! युवराज के बंदी हो जाने के बाद कौन बचा है, जो अब भेरी-घोष करेगा ? जो युद्ध के भोजन बन सकते हैं वे मनुष्य तो पहले ही मर चुके हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कारुवाकी : ठीक है, रेवा, परंतु कलिंग-विजय हो जाने से युद्ध बंद होने की कोई आशा नहीं है। अभी सिंहल-विजय शेष है। फिर कलिंग तथा सिंहल के बीच में कितने ही और देश हैं। उनमें कितने ही लाख नर-नारी बसते हैं। उन सबकी हत्या···उफ ! विधाता इस संसार को एक बार ही क्यों नहीं नष्ट कर देता !

रेवा : (खोई-खोई) हां महारानी ! मनुष्य की मनुष्य द्वारा हत्या करवाकर न जाने विधाता को क्या रस आता है !

कारुवाकी : (दूर झांकती हुई) मुझे तो कभी-कभी ऐसा लगता है जैसे विधाता है ही नहीं···

(प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी : महारानी की जय हो !

कारुवाकी : क्या है ?

प्रतिहारी : सम्राट् पधारनेवाले हैं, महारानी !

कारुवाकी : बहुत अच्छा।

(प्रतिहारी का प्रवेश)

कारुवाकी : सम्राट् पधार रहे हैं। रेवा, तुम बराबर के प्रकोष्ठ में ठहरो। हो सकता है कि तुम्हारी आवश्यकता पड़े। कुछ समय पूर्व उनके शिविर से समाचार मिला था कि वह आज बहुत उद्विग्न हैं। यूं तो वह कई दिन से खिन्न हैं पर आज सुना है कि कलिंग के युवराज ने उन्हें बहुत विचलित कर दिया है।

रेवा : जो आज्ञा, देवि !

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(जाती है। महारानी वातायन से हटकर मंच के द्वार की ओर बढ़ती हैं, तभी दूसरी ओर से सम्राट् अशोक प्रवेश करते हैं। मुख-मुद्रा बहुत प्रसन्न न होकर भी खिन्न नहीं है। पदचाप सुनकर महारानी मुड़ती हैं। मुस्कराती हैं।)

कारुवाकी : महाराज की जय हो ! पधारिये ! आज तो बहुत असमय हो गया है। महाराज का चित्त तो प्रसन्न है ?

अशोक : (पास आकर) युद्ध में चित्त की प्रसन्नता सापेक्ष होती है, देवि ! मैं स्वयं नहीं जानता कि मैं प्रसन्न हूं या खिन्न। विशेषकर जो कुछ मैं अब कर रहा हूं, उसने मुझे दुविधा में डाल दिया है।

(शय्या पर बैठ जाते हैं। महारानी खड़ी रहती हैं।)

कारुवाकी : अब आप क्या कर आये हैं, मैं सुन सकती हूं ? रेवा कह रही थी कि कलिंग के युवराज बंदी हो चुके हैं।

अशोक : वही तो ! उसीकी तो बात है।

कारुवाकी : क्या बात है ? उसका पकड़ा जाना तो एक तरह से अच्छा ही हुआ। युद्ध समाप्त हो गया। दस दिन से मरने-जीनेवालों की संख्या सुनते-सुनते जी ऊब उठा था।

अशोक : तुम्हारा जी भी ऊब उठा था ?

कारुवाकी : सभीका ऊब उठा होगा, स्वामी ! वह बात ही ऐसी थी। शस्त्रों की खटपट, असहाय घायलों की करुण पुकार, चिताओं से उठता हुआ आहों का धुआं, उनके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऊपर मंडराता हुआ जयघोष ! तब कुछ ऐसा लगता था, जैसे...

अशोक : जैसे...रुक क्यों गईं, देवि ! बताओ, तब कैसा लगता था ?

कारुवाकी : जैसे किसी मां के इकलौते पुत्र की शव-यात्रा का जुलूस निकल रहा हो।

(कहकर स्वयं कांप उठती है। महाराज के मुख पर कई रंग आते और जाते हैं।)

अशोक : (धीमा स्वर) ठीक ऐसा ही, देवि ! ठीक ऐसा ही मुझे भी लगता था।

कारुवाकी : (चकित) आपको भी ऐसा ही लगा था ?

अशोक : हां देवि ! ऐसा ही लगा था और जब युवराज ने मुझे गीदड़ कहा, तो मेरा संदेह और भी दृढ़ हो गया।

कारुवाकी : (कांपकर) क्या...यह क्या कहा आपने, स्वामी ?

अशोक : (उसके कंपन को देखकर मुस्कराता है) गीदड़ ! श्मशान में खोपड़ी ठुकरानेवाला गीदड़ !

कारुवाकी : (आवेग में) यह कहा उसने ? कलिंग के युवराज ने भारत-सम्राट् को यह कहा और वह जीवित रहा ? उसका इतना साहस ! उसका सिर नहीं उड़ा दिया आपने !

अशोक : सिर उड़ा देने की आज्ञा सुनाने पर ही तो उसने मुझे गीदड़ कहा। उसने कहा—बस, यही है तुम्हारी वीरता ? यही है तुम्हारा शौर्य, इसी बल पर सम्राट् बने हो ! एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बंदी का सिर नहीं झुका सके। खोपड़ियां ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं···लेकिन वह वीर पुरुषों का मार्ग नहीं है।

कारुवाकी : (चकित फुसफुसाती है) एक बंदी का सिर नहीं झुका सके···खोपड़ी ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं, लेकिन वह वीर पुरुषों का मार्ग नहीं है···वीर पुरुषों का मार्ग (एकदम) फिर आपने क्या किया ?

अशोक : फिर मैंने उसको दिये गए मृत्यु-दण्ड की आज्ञा वापस ले ली।

कारुवाकी : (और भी चकित) क्या···क्या कहा आपने ?

अशोक : यही कि मैंने मृत्यु-दण्ड की आज्ञा वापस ले ली और उसका राज्य उसे लौटा दिया।

(अचरज से रानी के नेत्र फैल जाते हैं। हतभाग्य-सी वह कभी सम्राट् को, कभी दीपक के कंपित प्रकाश को देखती है। फिर फुसफुसाती है।)

कारुवाकी : (जैसे अपने से बोलती है) मृत्युदण्ड की आज्ञा वापस ले ली। उसका राज्य उसे लौटा दिया···। जिस राज्य के लिए लाखों मानवों का रक्त बहा, लाखों ललनाओं की सुहाग की लाली पुँछी, लाखों माताओं की गोदें सूनी हो गईं। जिस राज्य के लिए नगर वीरान हो गये, भवन खंडहर बन गये, पृथ्वी और आकाश अनाथों, अपाहिजों, आहतों की आहों से कांप उठे, वही राज्य आपने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसे लौटा दिया। इतना बड़ा मरण-त्योहार मनाकर, इतनी बड़ी दानवी लीला के बाद...

अशोक : (अनबूझ-सा एकदम) हां, हुआ तो यही, पर नहीं जानता, यह ठीक हुआ या गलत। शायद गलत हुआ! पर न जाने यह सब कैसे हो गया! मुझे स्वयं विश्वास नहीं आता। शायद तुम्हें भी नहीं आ रहा...बात कुछ ऐसी ही है...मगध का प्रतापी सम्राट्...

कारुवाकी : (एकदम) नहीं-नहीं, सम्राट्। मैं यह नहीं कहती। मैं तो...मैं तो केवल यह जानना चाहती थी कि यह सब क्या हो गया?

अशोक : (मुस्कराकर) और क्यों हो गया, यह नहीं जानना चाहतीं, देवि! ठीक यही प्रश्न मैं अपने से पूछ रहा हूं कि अशोक, तूने यह सब क्यों किया!

कारुवाकी : (चकित) क्यों किया?

अशोक : (दृढ़ता) क्योंकि मैं कलिंग के युवराज से पराजित होना नहीं चाहता था। क्योंकि मैं उसका सिर झुकाना चाहता था, काटना नहीं चाहता था।

कारुवाकी : सिर झुकाना चाहते थे, काटना नहीं चाहते थे। स्वामी, आज कौन-सी भाषा बोल रहे हैं? दस दिन से जो कुछ मैं सुन रही थी, वह रक्त और ज्वाला की भाषा थी...आज श्मशान से वसंत-विहाग का राग कैसे छिड़ गया?

अशोक : देवी का व्यंग समझता हूं। परंतु प्रिये! मैं महत्त्वा-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कांक्षी हूं। मैं विजय चाहता हूं, किसी भी मूल्य पर विजय ! मेरे नाम से गांधार से लेकर केरल तक, कामरूप से लेकर सौराष्ट्र तक, सारा देश कांपता है। मैंने कलिंग को पराजित करने का निश्चय किया है। उस कलिंग को, जिसने शक्तिशाली नंदों की शक्ति को खंड-खंड कर दिया था, जिसने मेरे प्रतापी पिता और पितामह के सामने नतमस्तक होने से इन्कार कर दिया था, जिसने सोलह राज्यों को उखाड़ फेंकनेवाले महामति चाणक्य की बुद्धि को चुनौती दी थी, उसी कलिंग को मैं मौर्य-साम्राज्य में लय कर देना चाहता था। उसके पराभव के बिना मौर्य-साम्राज्य का एकीकरण असंभव था। इसी बात के लिए मैंने उसके वैभव को धूल में मिला दिया। उसके शरीर को खंड-खंड कर डाला...पर... (निःश्वास)

कारुवाकी : ...पर क्या स्वामी !

अशोक : पर मैं उसे अपना नहीं बना सका। मेरे हृदय में एक ऐसी ज्वाला सुलग रही है, जो जय-जयकार का उपहास करती हुई मानो मुझसे कहती है—अशोक, जो कुछ तुमने किया है, एक दिन उसके लिए तुम खून के आंसू बहाओगे। तुम्हारी आत्मा तुम्हें धिक्कारेगी (एकदम) नहीं, नहीं, मैं यह स्थिति नहीं चाहता। मैं उसे अपना बनाना चाहता हूं। मैं गीदड़ बनकर श्मशान में खोपड़ी नहीं ठुकराना चाहता...मैं जीतना चाहता हूं !

कारुवाकी : स्वामी ! स्वामी ! आप अस्वस्थ हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अशोक : नहीं जानता कि मैं अस्वस्थ हूं या स्वस्थ, पर मैं हारना नहीं चाहता। इसीलिए मैंने कुमार को क्षमा कर दिया और उसका राज्य उसे लौटा दिया। यही नहीं, मैंने एक और निश्चय किया है।

कारुवाकी : क्या निश्चय किया है ?

अशोक : मैंने निश्चय किया है कि यदि संघमित्रा चाहे तो युवराज को अपना पति वरण कर सकती है।

कारुवाकी : (ठगी-सी) स्वामी...स्वामी...जेठ की तपती दोपहरी में सावन की पूर्वी वायु के झोंके ! रौरव नरक में स्वर्ग की सुगंध ! विश्वास नहीं आता, देव !

अशोक : विश्वास करने के लिए अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी, देवि ! परंतु मैं जानना चाहता हूं कि मैंने यह ठीक किया न ? मेरे अन्तर में कोई दुर्बलता तो नहीं घुस बैठी। अभी भी समय है। महेन्द्र और भिक्षु उपगुप्त युवराज को लेने गये हैं। राधागुप्त संघमित्रा को देखने गये हैं। वे आते ही होंगे। उन सबके आने के पूर्व मैं अपनी दुर्बलता को जान लेना चाहता हूं। (किसीके आने का स्वर) ओह, वे आ गये।

कारुवाकी : कौन है ?

(प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी : महाराज की जय हो ! सेनापति ने संदेश भेजा है।

अशोक : सेनापति ने संदेश भेजा है ? क्या ?

प्रतिहारी : उन्होंने अभी कुछ समय पूर्व रणभूमि से एक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भिक्षुणी को बंदी बनाया है।

अशोक : भिक्षुणी को ? क्यों ? वह वहां क्या कर रही थी ?

प्रतिहारी : देव ! जिस समय सैनिकों ने उसे देखा तो वह रणभूमि में घायलों की परिचर्या करती हुई घूम रही थी। जब उन्होंने उसे घेर लिया तो वह घबराई नहीं, हँसकर बोली—मुझे बंदी बनाओगे ? मैं तो स्वयं आ रही थी। मैं तुम्हारे सम्राट् से मिलना चाहती हूं।

अशोक : सच, उसने ऐसा कहा ! वह डरी नहीं ?

प्रतिहारी : नहीं देव ! डर तो उससे स्वयं डरता है। उसकी आंखों में गहरा विश्वास भरा हुआ है। सैनिकों ने जब उससे चलने को कहा तो वह बोली...

कारुवाकी : ...क्या बोली ?

प्रतिहारी : वह बोली—मैं तुम्हारे साथ चलूंगी पर तब, जब घायलों की परिचर्या पूरी हो जायगी। आप लोगों को बहुत जल्दी हो तो आप मेरी सहायता कर सकते हैं।

कारुवाकी : फिर...फिर क्या हुआ ?

प्रतिहारी : फिर सम्राट् के सैनिकों ने उसकी सहायता की।

कारुवाकी : क्या...क्या सैनिकों ने उसकी सहायता की ?

अशोक : मेरे सैनिकों ने घायलों की सेवा की ! ओह कितनी अद्भुत बात है ? कितनी शक्ति है उस भिक्षुणी में ?

कारुवाकी : जो सैनिकों का हृदय जीत ले, उसकी शक्ति साधारण नहीं हो सकती, सम्राट् ?

अशोक : प्रतिहारी, हम उससे मिलना चाहते हैं। तुम शीघ्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाकर उसे ले आओ। और देखो, पूरे आदर के साथ लाना।

प्रतिहारी : जो आज्ञा, देव !

(झुककर प्रणाम करता है और जाता है।)

अशोक : क्या विचार है, देवि, यह भिक्षुणी कौन हो सकती है ? वह शस्त्रों से बिल्कुल भी नहीं डरती। उलटे शस्त्र-धारियों को उसने अपने वश में कर लिया।

कारुवाकी : मुझे लगता है कि इसमें कोई रहस्य है।

अशोक : रहस्य ? इसमें क्या रहस्य हो सकता है, देवि ?

कारुवाकी : उसने आपसे मिलने की इच्छा प्रकट की है न ?

अशोक : हां-हां, वही तो प्रतिहारी कहता था।

कारुवाकी : सम्राट्, उस रहस्यमय भिक्षुणी का असमय में इस प्रकार रणभूमि में घूमना साधारण बात नहीं है। वह अवश्य कलिंग के राजकुल या राजतन्त्र से सम्बन्ध रखती है।

अशोक : तो...

कारुवाकी : तो क्या, सम्राट् ! वह प्रतिशोध चाहती है और जब नारी प्रतिशोध लेने की बात सोच लेती है, तो फिर वह किसी बात की चिंता नहीं करती। मुझे इसमें षड्-यंत्र जान पड़ता है। सम्राट् सावधान रहें।

अशोक : (मुस्कराकर) भिक्षु ठीक कहते थे कि राजकुलवालों की शब्दावली बहुत कम होती है। वैभव, विलास, शंका षड्यंत्र, प्रतिशोध, इनके अतिरिक्त उन्हें और कुछ नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

झूमता...

(प्रतिहारी का प्रवेश)

अशोक : क्यों ? क्या भिक्षुणी आ गई ?

प्रतिहारी : नहीं महाराज ! भिक्षुणी तो नहीं, एक भिक्षु है।

अशोक : भिक्षु, इस समय ! कलिंग में क्या भिक्षुओं और भिक्षुणियों के अतिरिक्त और कोई नहीं बचा है।

कारुवाकी : सुना है, सम्राट्, जो मर नहीं सके, वे सब-के-सब पीले वस्त्र धारण करके भिक्षु बन गये हैं।

अशोक : जान तो कुछ ऐसा ही पड़ता है, देवि ! अच्छा प्रतिहारी ! ये भिक्षु कैसे हैं।

प्रतिहारी : बड़े क्रोधी हैं ?

अशोक : क्रोधी ! क्या तुमसे लड़ पड़े ?

प्रतिहारी : सम्राट् क्षमा करें, मैंने जब उनसे रुकने को कहा तो वह लड़े ही नहीं, मुझे मारने भी दौड़े।

अशोक : मारने दौड़े ?

कारुवाकी : महाराज सावधान रहें। ऊपर जो शांति दिखाई देती है, उसके नीचे ज्वालामुखी धधक रहा है।

अशोक : (प्रतिहारी से) अच्छा, उन्हें आने दो।

प्रतिहारी : जो आज्ञा !

(जाता है।)

अशोक : देवि ! ज्वालामुखी मेरे भी भीतर धधक रहा है। देखूं शायद भिक्षु कोई राह सुझा सकें।

कारुवाकी : जो स्वयं राह से भटका हुआ है, वह दूसरे को क्या

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मार्ग दिखायेगा ?

अशोक : वह न सही, उसकी असफलता अवश्य मार्ग दिखायेगी।

(भिक्षु का प्रवेश)

अशोक : भंते ! मैं प्रणाम करता हूं।

भिक्षु : प्रणाम की कोई आवश्यकता नहीं है, सम्राट् ! आवश्यकता है सतर्कता की। बुद्ध के चेले-चेलियां पीले वस्त्रों के नीचे शस्त्र छिपाये फिरते हैं।

अशोक : (एकदम) क्या कहा ? कौन हो तुम ! (ध्यान से देखकर) ओह ! तुम हो, बंधुजीव। समझा, तुम क्रोध करके भिक्षुओं को बदनाम करते फिरते हो।

कारुवाकी : अरे, तुम तो पहचाने भी नहीं जाते।

भिक्षु : देवि ! बंधुजीव को कोई पहचान ले तो फिर बात ही क्या है। तोसली में सैकड़ों व्यक्ति भिक्षु बंधुजीव से प्रव्रज्या ग्रहण करने को प्रस्तुत हैं।

कारुवाकी : फिर यहां क्यों आये ? हमें प्रव्रज्या देने ? पर हम इतने भोले नहीं हैं। हम विजयी हैं। जाओ, जाकर उन्हें ही दीक्षा दो।

भिक्षु : मैं दे तो देता, पर स्वयं कपटी होकर उनके कपट को पहचान गया हूं, इसलिए सम्राट् से सलाह करने आया हूं।

अशोक : बोलो, क्या कहना चाहते हो।

भिक्षु : यही कि जो प्रतिशोध के लिए प्रव्रज्या ग्रहण करना चाहते हैं, उन्हें प्रणाम किया जाता है या प्राणदंड दिया

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जाता है।

अशोक : तुम्हारे पास प्रमाण है ?

भिक्षु : बंधुजीव का मस्तिष्क भले ही आकाश को छूता हो, उसके पैर धरती पर लगे हैं। सम्राट् सावधान रहें। अभी जो एक भिक्षुणी आनेवाली है...

कारुवाकी : (एकदम) हां-हां, आनेवाली है। कौन है वह ?

अशोक : वही भिक्षुणी जो युद्ध-भूमि में घायलों की सेवा कर रही थी ?

भिक्षु : जी हां, वही। वह घायलों की सेवा नहीं कर रही थी, सम्राट् से मिलने का मार्ग सरल कर रही थी। मैंने उसे उसके असली रूप में देखा है।

अशोक : कौन है वह ?

भिक्षु : ठीक-ठीक पहचान नहीं पाया, सम्राट्। पर है वह किसी बड़े कुल की। उसका रूप इस बात का साक्षी है। कल जब मैंने देखा तो वह साधारण नारी के रूप में थी और तोशली के अधमरे और अर्द्ध-विक्षिप्त व्यक्तियों को युद्ध के लिए भड़का रही थी।

अशोक : सच ! पर वह भिक्षुणी क्यों बनी ?

भिक्षु : इसलिए कि वह आप तक आ सके और...

कारुवाकी : और...?

भिक्षु : बंधुजीव की जिह्वा उन शब्दों का उच्चारण नहीं कर सकती, देवि !

अशोक : हमारी जिह्वा कर सकती है। भिक्षुणी हमारी हत्या

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करना चहती है।

भिक्षु : सम्राट् ने ठीक समझा।

अशोक : (क्रोध) सम्राट् सदा ठीक समझते हैं और यह भी समझते हैं कि हत्यारे से अपनी रक्षा कैसे की जा सकती है।

भिक्षु : जानता हूं, सम्राट्। आवश्यकता पड़ने पर सैनिक मिल सकें, इसका प्रबंध कर आया हूं। अच्छा, प्रणाम! अब जाकर प्रव्रज्या देना शुरू करता हूं। दुःख यही है कि चंडगिरि के लिए काम बहुत हो गया है।

(उठता है।)

अशोक : (एकदम) बंधुजीव!

भिक्षु : सम्राट्!

अशोक : (सहसा मौन हो जाते हैं)

भिक्षु : क्या आज्ञा है, सम्राट्!

अशोक : (चौंककर) कुछ नहीं, जाओ।

भिक्षु : जो आज्ञा! (मुड़ता है)

अशोक : (पुकारता है) बंधुजीव! प्रव्रज्या का काम आज रात रुक सकता है?

भिक्षु : सम्राट्! प्रव्रज्या रात में नहीं दी जाती।

अशोक : तो जाओ।

(बंधुजीव[1] का प्रस्थान। प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी : सम्राट् की जय हो! भिक्षुणी उपस्थित है।

---

१ रंगमंच पर प्रस्तुत करते समय बंधुजीव का प्रसंग छोड़ा जा सकता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अशोक : उसे आने दो। और सुनो, तुम सब बाहर ठहरो।

प्रतिहारी : जो आज्ञा !

(झुककर प्रणाम करता है और जाता है।)

कारुवाकी : सम्राट् ! अब तो विश्वास करेंगे कि भिक्षुणी किसी षड्यंत्र की सूत्रधार है। वह प्रतिशोध लेने निकली है।

अशोक : हम-तुम यहीं हैं, प्रिये ! देखते हैं कि वह कैसा और किस प्रकार प्रतिशोध लेती है।

(भिक्षुणी का प्रवेश। पीत वस्त्र, किंचित् श्याम वर्ण, आकर्षक नयन, कलाभय भ्रूबंक और विश्वास भरनेवाली मुद्रा। लगता है, किसी सुन्दरी ने नाटकीय रंगमंच के लिए भिक्षुणी का रूप धारण किया है। सम्राट् उसे देखते हैं। कुछ खोजना चाहते हैं, पर सहसा सम्राट् की पद-मर्यादा का ध्यान करके दृष्टि घुमा लेते हैं। रानी कारुवाकी आश्चर्य से उसके अंग-अंग को देखती हैं और देखती रह जाती हैं। कई क्षण बीत जाते हैं तब सहसा सम्राट् संभलकर बोलते हैं।)

अशोक : तुम कौन हो ?

भिक्षुणी : जो सम्राट् देख रहे हैं, एक भिक्षुणी !

अशोक : (कठोर होने की चेष्टा) इस समय रणभूमि में क्या कर रही थीं ?

भिक्षुणी : वह भी सम्राट् सुन चुके हैं।

अशोक : (साधिकार) सम्राट तुम्हारे मुख से सुनना चाहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो दिखाई देता है, वही सदा सत्य नहीं होता।

भिक्षुणी : (मुस्कराकर) सम्राट् सत्य और झूठ का निर्णय करना भी जानते हैं ?

कारुवाकी : भिक्षुणी ! सम्राट् से विवाद न करके प्रश्न का उत्तर दो।

भिक्षुणी : (उसी तरह मुस्कराकर) ओह ! महारानी की सम्राट् की अवहेलना देखकर दुःख हुआ। परंतु महारानी ! प्रश्न का उत्तर न देने की मेरी कोई इच्छा नहीं है। मैं केवल यह जानना चाहती हूं कि आप लोग मुझमें और मेरे कामों में दिलचस्पी क्यों लेते हैं ?

कारुवाकी : क्योंकि तुम शत्रु-पक्ष की हो। तुम्हारा कुछ उद्देश्य हो सकता है।

भिक्षुणी : (हँसकर) उद्देश्य ! मेरा कुछ उद्देश्य हो सकता है। शत्रु का कुछ उद्देश्य हो सकता है, महारानी ! तुमने कुछ गलत नहीं समझा। मेरा उद्देश्य है।

अशोक : (एकदम) क्या उद्देश्य है तुम्हारा ? सच बताओ, क्या तुम प्रतिशोध लेने आई हो ?

भिक्षुणी : (सहसा कांपकर) किसका प्रतिशोध, सम्राट् ?

अशोक : अपने देश का प्रतिशोध। कलिंग को पराजित करने का प्रतिशोध। (आवेश से) लेकिन तुम भूलती हो। तुम प्रतिशोध नहीं ले सकतीं···तुम मेरी हत्या नहीं कर सकतीं ···मैं···मैं···

(कटार खींच लेता है।)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भिक्षुणी : सम्राट् ! हत्या करते-करते आप सिवाय हत्याओं के और कुछ नहीं सोच सकते। आप उस बिल्ली की तरह हैं जो स्वप्न में भी छिछड़े ही देखती है।

कारुवाकी : भिक्षुणी ! तुम भारत-सम्राट् से बातें कर रही हो।

भिक्षुणी : देवि ! सत्य कहने के लिए कुछ नहीं सोचा जाता। (मुड़कर) सम्राट् ! मैंने कहा था कि मेरे आने का उद्देश्य है। वह उद्देश्य है आप तक कलिंग के निवासियों का संदेश पहुंचाना।

अशोक : कलिंग के निवासियों का संदेश ! क्या अभी कलिंग में संदेश भेजनेवाले बचे हैं ?

भिक्षुणी : बचे क्यों नहीं हैं ! सम्राट्, अभी वे नारियां शेष हैं जिनके सुहाग की लाली रक्त की लाली बनकर धरती पर बह रही है, जिनकी कोख के रत्न गिद्धों और गीदड़ों के भोजन बने हुए हैं। अभी वे वृद्ध बचे हैं, जिनके नेत्र हैं, पर दृष्टि नहीं है; जिनके शरीर हैं, पर प्राण नहीं हैं; जिनके कान हैं, पर वे सुन नहीं पाते; जो तिल-तिलकर प्राणदान कर रहे हैं...

अशोक : भिक्षुणी...भिक्षुणी, बंद करो यह शब्दजाल...

भिक्षुणी : (अनसुना करके उसी तरह) सम्राट् ! अभी वे बालक भी बचे हुए हैं, जो महानाग की दानवी लीला का रक्त पीकर बढ़ रहे हैं। अभी वे खंडहर नष्ट नहीं हुए हैं, जिनमें बसनेवाले उल्लू और चमगादड़ दिन-रात आपका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गुणगान करते रहते हैं। सम्राट्! इन सबने मुझसे कहा है कि मगध के उस अत्याचारी राजा से कह देना, "मरण तो संसार का नियम है, उसके लिए उसने इतने प्रयत्न क्यों किये? यदि वह जीवन के लिए इससे दशांश शक्ति भी खर्च करता तो संसार विधाता को भूल जाता।"

अशोक : (चकित) भिक्षुणी...भिक्षुणी!

भिक्षुणी : मैं यही कहना चाहती थी। मैं यही कहने आई थी!

अशोक : (खोया-खोया) भिक्षुणी, तुम यही कहने आई हो। तुम प्रतिशोध लेने नहीं आईं। नहीं, तुम झूठ बोल रही हो...तुम अवश्य प्रतिशोध लेने आई हो।

भिक्षुणी : मैं प्रतिशोध लेने आई हूं। किसका प्रतिशोध? कैसा प्रतिशोध? सम्राट्, तुम यदि यह समझते हो कि तुमने कलिंगवासियों का नाश किया है, तो तुम भूल करते हो। तुमने उनका नहीं, अपना नाश किया है। पराजय उनकी नहीं, तुम्हारी हुई है। कलिंग हारकर भी जीत गया है। तुम जीतकर भी हार गये हो।

अशोक : मैं जीतकर भी हार गया हूं...

भिक्षुणी : हां सम्राट्! तुम जीतकर भी हार गये हो। तुमने जीवन का नाश किया है और जीवन का नाश करनेवाले सदा पराजित होते हैं।

कारुवाकी : भिक्षुणी! तुम्हारे वस्त्र पीले हैं, पर तुम्हारी वाणी में आग है।

भिक्षुणी : महारानी! पीले वस्त्रों का अर्थ निष्क्रियता नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है और क्रिया में सदा अग्नि होती है। अग्नि जीवन की शर्त है। वह प्रकाश भी देती है और जलाती भी है। यह दूसरी बात है कि कुछ लोग अपने-आपको जला लेते हैं, कुछ अपनी दुर्बलता को।

कारुवाकी: भिक्षुणी! अग्नि जीवन की शर्त हो सकती है, पर शब्दजाल सत्य की शर्त नहीं है। वाक्-चातुरी से उद्देश्य पूरे नहीं हुआ करते।

भिक्षुणी: जानती हूं, महारानी! उद्देश्य वाक्-चातुरी से नहीं, कर्म-चातुरी से पूरे होते हैं। पर बंदिनी को कर्म करने की स्वतंत्रता कहां है?

अशोक: तुम बंदिनी हो?

भिक्षुणी: मेरा यहां होने का यही अर्थ है।

कारुवाकी: (कठोरता से) तब तुम यह भी जानती होगी कि बंदिनी के साथ कैसा व्यवहार किया जाता है।

भिक्षुणी: जानती क्यों नहीं। मगध देश में उनका सिर उड़ा दिया जाता है। (मुड़कर) कटार उठाइये, सम्राट्! उठाइये! मैं तैयार हूं।

(शीघ्रता से आगे बढ़कर सम्राट् के सामने बैठ जाती है।)

कारुवाकी: (कांपकर) भिक्षुणी!

अशोक: (कांपकर) भिक्षुणी...भिक्षुणी...! यह तुमने क्या कहा?

भिक्षुणी: जो सत्य है।

अशोक: जो सत्य है। नारी का सिर उड़ाना सत्य है? नारी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हत्या करना सत्य है ? मैं नारी की हत्या कर सकता हूं ? मैं नारी पर हाथ उठा सकता हूं ?

भिक्षुणी : नहीं जानती थी कि मगध के सम्राट क्रूर होने के साथ ढोंगी भी हैं। अभी तो वह कटार खींच रहे थे और अभी नारी-हत्या के विचार-मात्र से ही उनके कोमल हृदय पर चोट लगी, पर मैं पूछती हूं (आवेश) कलिंग-युद्ध के हताहत लक्ष-लक्ष अभागे सैनिकों के क्या मां-बहिन-बहू-बेटी नहीं थीं ? क्या वे मां-बहिन-बहू-बेटी नारी नहीं हैं?

कारुवाकी : फिर वही आवेश ! फिर वही शब्द-जाल !

भिक्षुणी : महारानी ! सत्य को बार-बार शब्द-जाल कहकर झुठलाया नहीं जा सकता। मैं कलिंग की आहत आत्मा की प्रतिनिधि हूं। मुझसे आप वीणा के मधुर संगीत की आशा नहीं कर सकतीं। आप तो नारी हैं। आप मेरे साथ चलिये। मैं आपको दिखाऊंगी कि कलिंग के हर नगर और गांव में ऐसी असंख्य नारियां हैं जो जीते-जी मौन हो गई हैं, जिनकी आत्मा झुलस गई है (मुड़कर) सम्राट्, क्या ही अच्छा हो कि आप उनके सिर काटकर उन्हें इस यातना से मुक्ति दें। जहां आपने इतना रक्त बहाया है, वहां थोड़ा और बहाइये, इस रक्त-यज्ञ को पूर्ण कीजिये। अब तक आपने जो कुछ किया था, वह हत्या थी। पर अब जो कुछ करेंगे वह उनपर उपकार होगी।

अशोक : (कांपकर) भिक्षुणी···भिक्षुणी···बस करो···बस करो ! ऐसा लगता है जैसे···

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(सहसा सिर पकड़कर बैठ जाते हैं। रानी दौड़ती है।)

कारुवाकी : महाराज ! महाराज ! क्या बात है ? क्या आप अस्वस्थ हैं ?

अशोक : (संभलकर) कुछ नहीं, देवि ! कुछ नहीं, मैं स्वस्थ हूं। मुझे ऐसा लगा था जैसे मैंने यह वाणी पहले भी सुनी है। कलिंग के युवराज ने भी कुछ ऐसा ही कहा था।

भिक्षुणी : कलिंग का युवराज और क्या कलिंग की साधारण नारी ! आज सबकी भाषा एक है। भावनाएं एक हैं। गति-मति सब एक है। सबका एक स्वर है—आपने मनुष्य को नहीं शवों को, नगरों को नहीं खंडहरों को जीता है। आप श्मशान के सम्राट् हैं।

अशोक : यही उसने कहा था...बिल्कुल यही ! मैं मनुष्य का नहीं, शवों का, नगरों का नहीं, खंडहरों का सम्राट् हूं। (एकदम) भिक्षुणी ! तुम ठीक कहती हो। मैंने नर-हत्या की है। मैंने नगरों को खंडहर बनाया। पर जो नगरों को खंडहर बना सकता है, वह क्या खंडहरों को नगर नहीं बना सकता ?

भिक्षुणी : नहीं बना सकता।

अशोक : नहीं बना सकता ! क्यों ?

भिक्षुणी : क्योंकि वह पराजितों में प्रतिशोध की आग भड़का देता है, और जो प्रतिशोध की भावना जगाता है, वह जीतकर भी हार जाता है। सम्राट् ! शस्त्रों की जीत जीत नहीं होती। यहां लोगों का इस प्रकार वध, मरण और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देश-निकाला हो, ऐसा जीतना न जीतने के बराबर है।

अशोक : (दोहराता हुआ) जहां लोगों का इस प्रकार वध, मरण और देश-निकाला हो, ऐसा जीतना न जीतने के बराबर है...जहां लोगों का इस प्रकार वध, मरण और देश-निकाला हो (एकदम) भिक्षुणी ! तुम कलिंग की साधारण नारी नहीं हो। तुम अवश्य किसी तत्त्वदर्शी की पुत्री हो। तुम मुझे बताओ कि क्या जीत का कोई और मार्ग भी होता है ?

कारुवाकी : सम्राट् ! आप अब बहुत थक गये हैं, विश्राम करिये। भिक्षुणी से सवेरे बातें कर सकते हैं। मैं विश्वास दिलाती हूं कि मैं आदरपूर्वक इन्हें अपने साथ रखूंगी।

अशोक : देवी डर गई जान पड़ती हैं। अशोक इस प्रकार व्यथित होनेवाला नहीं है और भिक्षुणी के शब्द मेरे घायल मन पर अमृत बरसा रहे हैं। (मुड़कर) हां देवि! क्या तुम जीत का कोई और मार्ग जानती हो ?

भिक्षुणी : सम्राट् मुझसे पूछते हैं ?

अशोक : हां। कोई डर है ?

भिक्षुणी : है।

अशोक : क्या ?

भिक्षुणी : मैं सम्राट् के शत्रु-पक्ष की हूं।

अशोक : नहीं देवि ! अब मेरा कोई शत्रु नहीं है। मैंने युवराज को क्षमा कर दिया है।

भिक्षुणी : युवराज को ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अशोक : हां, कलिंग के युवराज को मैंने क्षमा कर दिया। उसका राज्य उसे लौटा दिया। मुझे खेद है कि उसके पिता और दूसरे संबंधी युद्ध में मारे गये। सुना है, उसकी एक बहिन बची है। पर अभीतक उसका कुछ पता नहीं लगा। और...और यह अचरज की बात है कि उसका और तुम्हारा स्वर बहुत-कुछ मिलता है। विचार भी वे ही हैं। रूप भी कुछ-कुछ...

भिक्षुणी : (एकदम) यह संयोग की बात है, सम्राट्। नहीं तो कहां कलिंग के युवराज और कहां उसके एक साधारण नागरिक की पुत्री।

अशोक : यह तो और भी गौरव की बात है, भिक्षुणी। कलिंग की सर्व संतानें इतनी भयहीन हैं। भय मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। जो भय को जीत लेता है, वह महान है। तुम भी महान हो। युवराज भी महान है। मैं भी महानता चाहता हूं। मैं तुम सबका मित्र बनना चाहता हूं, इसीलिए मैंने राजकुमार को क्षमा कर दिया।

भिक्षुणी : ठीक है सम्राट्, परंतु...

अशोक : परंतु ! परंतु क्या ?

भिक्षुणी : परंतु सम्राट् ! युवराज आपकी क्षमा ग्रहण नहीं करेंगे।

अशोक : युवराज मेरी क्षमा ग्रहण नहीं करेंगे ?

भिक्षुणी : नहीं।

अशोक : नहीं ! भिक्षुणी, तुम अवश्य रहस्यमयी हो। तुम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कौन हो ? तुम कैसे जानती हो कि युवराज मेरी क्षमा ग्रहण नहीं करेंगे और क्यों नहीं करेंगे ?

भिक्षुणी : क्योंकि वह वीर हैं और वीर पुरुष किसी की क्षमा ग्रहण नहीं किया करते।

अशोक : (कांपकर) वीर पुरुष किसीकी क्षमा ग्रहण नहीं किया करते...वीर पुरुष किसीकी क्षमा ग्रहण नहीं किया करते। यही...यही उसने भी कहा था।

भिक्षुणी : उसने ठीक कहा था और वह अपने वचनों पर दृढ़ रहेगा, वह आपके द्वारा दी गई प्राणों की भिक्षा नहीं लेगा।

अशोक : मेरे द्वारा दी गई प्राणों की भिक्षा नहीं लेगा ?

भिक्षुणी : हां, नहीं लेगा। कभी नहीं लेगा।

अशोक : (एकदम) कैसे नहीं लेगा ! मैंने प्राणदण्ड की आज्ञा वापस ले ली है। वह मेरा बंदी है। मेरी आज्ञा के बिना कोई उसका बाल नहीं छू सकता। मैं सम्राट् हूं।

भिक्षुणी : (हँसकर) सम्राट् को अपनी आज्ञा पर बहुत घमंड है पर कलिंग का युवराज उसकी सीमा से बहुत दूर है।

अशोक : (क्रुद्ध) इतना विश्वास! देखूंगा उसे कौन मारता है?

भिक्षुणी : उसे उसका कर्तव्य मारेगा, सम्राट्। कलिंग का रक्त-यज्ञ अभी पूर्ण नहीं हुआ है। अभी महती निशा आनी शेष है...अभी कुछ और हृदय टूटने शेष हैं...अभी आपको अपनी और पराजय देखनी शेष है...अभी युवराज का बलिदान शेष है...

(आवेश और दृढ़ता की इस भविष्यवाणी से सम्राट् और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महारानी कांप उठते हैं। महारानी सहसा आगे बढ़कर आती हैं।)

कारुवाकी : भिक्षुणी, सच बताओ, तुम कौन हो? तुम अब और अधिक धोखा नहीं दे सकतीं, तुम साधारण नागरिक की कन्या नहीं हो। तुम आज भिक्षुणी हो सकती हो, पर कल...

भिक्षुणी : (एकदम) निस्संदेह, कल मैं भिक्षुणी नहीं थी।

अशोक : कल तुम भिक्षुणी नहीं थीं! (फुसफुसाकर) कल तुम भिक्षुणी नहीं थीं...तो मेरा अनुमान ठीक है। तुम... तुम कलिंग की राजकुमारी हो।

भिक्षुणी : हां सम्राट्! आपका अनुमान ठीक है। मैं कलिंग की राजकुमारी हूं।

अशोक : कलिंग की राजकुमारी! युवराज की बहिन!

कारुवाकी : कलिंग की राजकुमारी! तुम कलिंग की राजकुमारी और इस वेश में... (दौड़कर गले लगा लेती है) राजकुमारी...

अशोक : राजकुमारी! राजकुमारी! (दोनों हाथों से मुंह ढककर) राजकुमारी, मैं तुम्हारे पिता का हत्यारा हूं। मैंने तुम्हारे देश को उजाड़ा है।

भिक्षुणी : (गंभीर स्वर से) हां सम्राट्! आप मेरे पिता के हत्यारे हैं, आपने मेरे देश को उजाड़ा है, मैं भी आपकी हत्या का निश्चय करके घर से चली थी। मैंने भी आपका नाश करने के लिए ये वस्त्र धारण किये थे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर...

कारुवाकी : क्या तुम हत्या करने चली थीं ? हत्या करने...

अशोक : तुम मेरी हत्या करने आई थीं पर...पर क्या ! क्या हुआ ? तुमने मेरी हत्या का विचार क्यों छोड़ दिया ?

भिक्षुणी : छोड़ना पड़ा ?

अशोक : छोड़ना पड़ा ! क्यों...?

भिक्षुणी : सम्राट् ! जब मैंने भिक्षुराज से प्रव्रज्या ग्रहण की और ज व तथागत के पवित्र मंत्र का उच्चारण किया तो...

कारुवाकी : (चकित) तो...

अशोक : (मंत्र-मुग्ध) तो...तो क्या हुआ, राजकुमारी ?

भिक्षुणी : तो जैसे मेरे मन का सारा कलुष घुल गया। मुझे शस्त्र से प्रतिशोध लेना बुरा लगने लगा। मैंने भिक्षुराज से सब बातें बताकर पूछा कि क्या प्रतिशोध लेने का कोई और मार्ग भी होता है ?

अशोक : तब उन्होंने क्या कहा—बुद्ध-मार्ग में प्रतिशोध की भावना का त्याग ही प्रतिशोध है।

भिक्षुणी : ओह ! यही उन्होंने मुझसे कहा था। यही...

(राधागुप्त का प्रवेश)

राधागुप्त : सम्राट् की जय हो। राजकुमारी संघमित्रा बहुत देर से बंदी के पास हैं। राजकुमार महेन्द्र और भिक्षु उपगुप्त भी पहुंच गये होंगे। आप चलें...

अशोक : हां-हां, मैं अभी चलता हूं। महामात्य ! देखो, यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कलिंग की राजकुमारी हैं। मेरा वध करने के लिए भिक्षुणी बनी थीं और मैं समझता हूं, इन्हें काफी सफलता मिली है।

राधागुप्त : (चकित) क्या...क्या कहते हैं, सम्राट्! (कटार खींचता है) कौन है जो सम्राट् का वध करना चाहता है?

अशोक : (मुस्कराकर) कोई नहीं, कोई नहीं महामात्य! विष्णुगुप्त चाणक्य के शिष्य को इस प्रकार डरना शोभा नहीं देता। राजकुमारी मनुष्य का वध करने की एक नई रीति जानती हैं। वह मर जाता है, पर उसके प्राण नहीं निकलते। शायद तुम्हें विश्वास नहीं आ रहा है, पर आ जायगा। अब तो हम चल रहे हैं। आओ, राजकुमारी! आओ, देवी कारुवाकी! तुम भी आओ, प्रभात होनेवाला है। बंदीगृह में एक नव-प्रभात होने दो।

राधागुप्त : समझ में नहीं आता कि यह क्या हो रहा है। सब कुछ विचित्र, अविश्वसनीय, अद्भुत...

(सम्राट् शीघ्रता से रंगमंच से बाहर जाते हैं। महारानी के साथ राजकुमारी भी उसी दृढ़ता से जाती हैं। राधागुप्त सबसे पीछे कुछ खोया-खोया-सा जाता है।)

(परदा गिर जाता है।)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तीसरा अंक

(रंगमंच पर रात्रि का गहन अंधकार। रह-रहकर पहरुए की पुकार उठती है। मंच पर एक ओर दीपक का मंद प्रकाश हो रहा है। मानो वह वहां सिमिट गया है। कुछ क्षण बाद उस प्रकाश में एक छाया उभरती दिखाई देती है। वह एक युवक की छाया है, जो एक शिला पर मौन बैठा हुआ किसी गहरी विचारधारा में निमग्न है। उसके शरीर की छाया तंबू की एक भित्ति पर ऐसे पड़ रही है जैसे किसी कुशल चित्रकार ने विश्वास को चित्रित किया हो। वह कलिंग का राजकुमार है और अशोक की आज्ञा से बंदीगृह में मृत्यु की राह देख रहा है। इसी समय एक ओर से राजकुमारी संघमित्रा और उसके पीछे बंदीगृह का घातक चंडगिरि वहां आते हैं। राजकुमारी ने सिर से पैर तक एक काला वस्त्र पहना है। उसकी चाल स्थिर है पर उसके नयन चमकते हैं। चंडगिरि का विशाल शरीर, उसकी बड़ी-बड़ी मूंछें और हाथ की बड़ी कटार मन में भय पैदा करती हैं। दोनों रंगमंच के प्रवेश-द्वार पर आकर रुक जाते हैं। राजकुमारी मुड़ती है।)

संघमित्रा : तुम वहीं, बाहर ठहरो। चंडगिरि ! मैं एकान्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाहती हूं।

चंडगिरि : परन्तु देवि ! सम्राट् की आज्ञा है कि...

संघमित्रा : सम्राट् की आज्ञा मैं जानती हूं, चंडगिरि ! और यह भी जानती हूं कि तुमपर विश्वास किया जा सकता है। कुमार क्षमा मांग लें, तो सम्राट् उन्हें मुक्त करने को तैयार हैं। मैं चाहती हूं कि उन्हें...

चंडगिरि : देवि, यह सब ठीक है, लेकिन मेरा कर्तव्य मुझसे कहता है कि...

संघमित्रा : (विनय से) चंडगिरि ! मुझे राजकुमार से बहुत आवश्यक बातें करनी हैं। मैं चाहती हूं कि भिक्षु उपगुप्त के आने से पूर्व उन्हें समाप्त कर लूं।

चंडगिरि : (चकित) क्या भिक्षु उपगुप्त यहां आयेंगे ?

संघमित्रा : हां, चंडगिरि ! वह सम्राट् से आज्ञा लेने गये हैं।

चंडगिरि : सम्राट् उन्हें आज्ञा देंगे ? एक भिक्षु को यहां आने की आज्ञा देंगे ? असंभव, एकदम असंभव !

संघमित्रा : असंभव नहीं, चंडगिरि। उन्हें आज्ञा मिलेगी। सम्राट् जो न कर सके, उसे वह करना चाहते हैं। जाओ, उनकी राह देखो।

(चंडगिरि सहसा कुछ उत्तर न देकर शून्य में निहारता है।)

संघमित्रा : (विनम्र स्वर से) जाओ चंडगिरि !

चंडगिरि : (एकदम) जाऊं...अच्छा जाता हूं, राजकुमारी ! लेकिन दंड तो स्थिर है।

संघमित्रा : जबतक सम्राट् दूसरी आज्ञा न भेजें, तबतक वह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्थिर है।

चंडगिरि : अच्छा देवि ! मैं बाहर ठहरता हूं। लेकिन ध्यान रखिये कि उषा की प्रथम किरण के उदय होने से पूर्व आपको चले जाना होगा।

संघमित्रा : जानती हूं।

(जाता है। संघमित्रा एक क्षण उसे जाते देखती है। फिर राजकुमार की ओर मुड़ती है, पर आगे नहीं बढ़ती, वहीं खड़ी-खड़ी दीर्घ निःश्वास लेती है।)

संघमित्रा : (स्वगत—एक दीर्घ निश्वास लेकर) यह सब क्या है ? यह इतना आकर्षण क्यों है ? हृदय में यह धड़कन कैसी है ? यह स्पंदन किसका है ? (उच्छ्वसित स्वर) क्या प्रेम का ? (किंचित् ऊंचा स्वर) क्या मैं सचमुच राजकुमार से प्रेम करती हूं ? क्या मैं सचमुच उसे बचाना चाहती हूं ? क्या उसे बचाना ठीक है...वह शत्रु है। वह मेरे भाई, मेरे देश, मेरे सम्राट् का शत्रु है—शत्रु, हां, वह शत्रु है। मैं शत्रु से प्रेम करती हूं। मेरे देश का शत्रु मेरे हृदय-सिंहासन पर आ बैठा है। ओह...पर...पर शत्रु हुआ तो क्या ? वह वीर है, वह निर्भीक है, वह सुन्दर है। अभी उसी दिन जब उसका हाथी मगध की सेना में घुस गया था, तो वह काई की तरह फटती चली गई थी। बार-बार असंख्य सैनिकों ने उसे घेरने की कोशिश की, पर उसके छत्रधारी आरोही ने शरवृष्टि से सबको कुण्ठित कर दिया। तब वे ऐसे लगते थे जैसे देव-सेनापति कुमार कार्तिकेय युद्ध

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कर रहें हों। स्वयं सम्राट् ने एक दिन उनके शौर्यकी प्रशंसा की थी और आज भी वह ऊपर से जितने कठोर हैं, भीतर से उतने ही त्रस्त हैं। उन्होंने मुझसे पूछा था—क्या शस्त्र के अतिरिक्त किसीका वध करने की कोई और भी रीति होती है ? यह बताता है कि वह आलोड़ित हो रहे हैं और उनका अंतर्मन कुमार को क्षमा करने का मार्ग ढूंढ़ रहा है। मैं वही मार्ग उन्हें सुझाऊंगी और कुमार की रक्षा करूंगी, लेकिन...लेकिन कुमार...नहीं, नहीं, अब मैं कुछ नहीं सोचूंगी। समय बहुत कम है और मुझे कुमार को क्षमा स्वीकार करने के लिए मना लेना है।

(वह शीघ्रता से आगे बढ़कर मंच के उस ओर आती है, जहां दीपक के मंद प्रकाश में कुमार विचार-मग्न बैठा है। आहट पाकर वह चौंकता है।)

कुमार : कौन ? चंडगिरि ! क्या समय हो गया ?

संघमित्रा : (मौन रहती है।)

कुमार : बोलते नहीं ? कौन है ? (उठता है और राजकुमारी को नारी समझकर स्तंभित रह जाता है।) कोई नारी ! इस समय ? यहां ? कौन हैं आप ?

संघमित्रा : (मौन रहती है।)

कुमार : आप बोलतीं नहीं। (पास आता है, ध्यानसे राजकुमारी को देखता है और कांपकर पीछे हट जाता है।) आप... राजकुमारी संघमित्रा ! आप आई हैं ! समझा !

संघमित्रा : (पूर्ववत् मौन)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुमार : आई हैं तो आप बोलतीं क्यों नहीं ?

संघमित्रा : (मौन)

कुमार : शायद बंदी से कोई धृष्टता हो गई है। ओह समझा ! मैं देवी को प्रणाम करना भूल गया। बंदी कलिंग-कुमार देवी संघमित्रा को प्रणाम करता है। (हाथ जोड़कर प्रणाम करता है) पधारिये, आपने बंदीगृह में आने का कैसे साहस किया ?...भाई जो युद्ध-भूमि में नहीं कर सका, वह क्या बहिन बंदीगृह में करने आई है ?

संघमित्रा : (धीरे से आगे बढ़कर) मुझे प्रसन्नता है कि कुमार मुझे भूले नहीं हैं।

कुमार : (हँसकर) देवि ! कलिंग-कुमार की स्मृति इतनी क्षीण नहीं कि वह अपने शत्रु को भी भूल जाए।

संघमित्रा : (कांपकर) शत्रु ! मैं आपकी शत्रु हूं !

कुमार : कलिंग की भूमि को कलिंग-पुत्रों के रक्त से प्लावित करनेवाले अत्याचारी अशोक की बहिन शत्रु नहीं तो क्या हो सकती है ?

संघमित्रा : (दृढ़ स्वर में) हो सकती है।

कुमार : (चकित) हो सकती है ?

संघमित्रा : हां।

कुमार : देवी शायद पुरानी बातें याद कर रही हैं।

संघमित्रा : बातें कभी पुरानी नहीं होती, कुमार ! स्मृति उन्हें सदा नया रखती है।

कुमार : परन्तु बातें पुरानी न होने पर भी उनका प्रभाव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बदल जाता है, देवि !

संघमित्रा : नहीं कुमार, प्रभाव भी नही बदलता । वह केवल अपने से अधिक शक्तिशाली प्रभाव के पीछे छिप जाता है ।

कुमार : (हँसकर) शब्दों का यह माया-जाल नारी को ही शोभा देता है, राजकुमारी !

संघमित्रा : (पास आकर) शब्दों का मायाजाल ! कुमार ! शब्दों का यह मायाजाल भावना की भित्ति पर उठता है । कुछ देर पहले तुमने भैया से कहा था—बस, यही तुम्हारी वीरता है, यही तुम्हारा शौर्य है, इसी बल पर सम्राट् बने हो, एक बूंदी का सिर नहीं झुका सके ! खोपड़ियां ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं, लेकिन वह वीर पुरुषों का मार्ग नहीं है । इस सुन्दर शब्द-जाल के पीछे भी भावना की शक्ति थी ।

कुमार : नहीं, राजकुमारी संघमित्रा ! उन शब्दों के पीछे भावना नहीं, नग्न सत्य था ।

संघमित्रा : कुमार ! अंडा स्वयं जीव नहीं होता, पर उसके अन्तर में जीव समाया रहता है । नग्न सत्य और भावना की यही स्थिति है । भावना मनुष्य की वह शक्ति है, जो उसे कभी क्लांत नहीं होने देती ।

कुमार : (हँसता है) देखता हूं, देवी संघमित्रा ने भी अपने भाई की भांति न हारने का प्रण किया हुआ है ।

संघमित्रा : मैं प्रण में विश्वास नहीं करती । मैं उत्तर चाहती हूं ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुमार : (गंभीर शांत स्वर) उत्तर देना कोई कठिन नहीं है, देवि ! कठिन काम है आश्वस्त करना। और फिर तुम्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि बंदी के पास उत्तर देने का भी समय नहीं है। उसके जीवन की घड़ियां गिनी हुई हैं।

संघमित्रा : (शांत) मैं उन्हीं घड़ियों की सीमा तोड़ने आई हूं, कुमार !

कुमार : (चकित) उन घड़ियों की सीमा तोड़ने आई हो ? मैं तुम्हारा आशय नहीं समझा देवि !

संघमित्रा : आशय स्पष्ट है। मैं तुमसे तुम्हारे प्राणों का दान मांगने आई हूं, कुमार !

(दृढ़ रहना चाहकर भी कांप उठती है।)

कुमार : (चकित) मुझसे ! (अट्टाहास करता है) मुझसे, खूब ! देवी तर्क की भांति नाट्यकला में भी प्रवीण जान पड़ती हैं, तभी अपने भाई के पास न जाकर मेरे पास आई हैं।

संघमित्रा : (उसी तरह शांत) भैया के पास जाकर मैं क्या करती ? वह प्राण ले सकते हैं, दे नहीं सकते। दे तुम ही सकते हो।

(कुमार कांपता है। पर दूसरे ही क्षण तीव्र हो उठता है)

कुमार : (तीव्र स्वर) तो तुम कहना चाहती हो कि मैं तुम्हारे भैया के पास जाकर क्षमा मांगूं ? उसकी अधीनता स्वीकार करूं ?

संघमित्रा : (एकदम व्याकुल स्वर में) नहीं-नहीं, मैं यह नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहती। मैं यह कह ही नहीं सकती।

कुमार : तो क्या कहती हो ?

संघमित्रा : मैं कहती हूं कि सम्राट् यदि तुम्हारी मुक्ति का आदेश भेजें, तो उसे अस्वीकार मत करना।

कुमार : (ठगा-सा) क्या...क्या मगध का क्रूर सम्राट् मेरी मुक्ति का आदेश देगा ?

संघमित्रा : दे सकता है।

कुमार : पर क्यों ? कैसे ?

संघमित्रा : क्यों और कैसे जानने की इतनी चिंता मत करो, कुमार ! मनुष्य कब क्या कर बैठेगा, कौन जानता है ? मगध-सम्राट् की मानसिक स्थिति इस समय ऐसी है कि मेरे कहने पर वह तुम्हें क्षमा कर सकते हैं।

कुमार : तुम्हारे कहने पर वह मुझे क्षमा कर सकते हैं ! तुम्हारे कहने पर ! तुम मेरी मुक्ति की प्रार्थना करोगी ?

संघमित्रा : आज्ञा दो तो !

कुमार : पर क्यों ?

संघमित्रा : क्यों !

कुमार : हां, तुम मेरी मुक्ति की प्रार्थना क्यों करना चाहती हो ? तुम मुझे क्यों बचाना चाहती हो ? क्यों...क्यों...

संघमित्रा : (खोई-खोई) क्यों करना चाहती हूं ? क्यों बचाना चाहती हूं ? (धीरे से) तुम नहीं जानते ?

कुमार : शायद...शायद नहीं जानता...तभी तो पूछता हूं।

संघमित्रा : (उच्छ्वसित स्वगत) नहीं जानते तभी पूछते हो।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ओह...निष्ठुर कुमार ! आखेट के बाद की वह रात भूल गये। भूल गये वे प्यार की बातें ? जब तुमने कहा था... तुमने कहा था...ओह, कैसे बताऊं...कैसे बताऊं...तुम्हें कैसे बताऊं कि...कि तुमने कहा था—तुम्हारे नयन शरत् की ज्योत्स्ना को लजाते हैं। तुम्हारा हास्य हिम-शिखर के प्रभात से अधिक मनोरम है। तुम्हारी वाणी में मलय का संगीत है। तुम्हारे गीतों में यौवन का नृत्य है।

(बोलते-बोलते भावातिरेक हो जाता है। कुमारी प्रकोष्ठ की भित्ति का सहारा लेकर मौन होजाती है। नेत्र मुंद जाते हैं। शरीर शिथिल पड़ जाता है। केवल तीव्र श्वास समय के अंतर पर उठती है। मौन में उसीका स्वर चीत्कार करता है। कुमार स्थिर भाव से उसे देखते हैं, देखते रहते हैं। क्षण आते हैं, युग जाते हैं। कुमार फुस-फुसाते हैं।)

कुमार : (धीरे-धीरे) राजकुमारी ! तुम मौन क्यों हो गईं? बोलतीं क्यों नहीं ?

(मौन)

कुमार : कुमारी सोच रही हैं।

(कुमारी मौन ही रही, पर उसका रूप जैसे प्रेमल ज्योति की तरह भासमान हो उठा। कुमार को लगा जैसे कुमारी के नेत्रों से झरता हुआ एक परम शांत, परम उज्ज्वल प्रकाश उसकी ओर बह रहा है और जैसे संघमित्रा स्वयं लुप्त होकर उसके नेत्रों से होती हुई उसके अंतर में समा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गई है। वह कह उठता है।)

कुमार : राजकुमारी ! राजकुमारी ! तुम कहां हो ? तुम बोलतीं क्यों नहीं ? बोलो...बोलो, तुम कहां हो ?

संघमित्रा : (जाकर उनींदे स्वर में) कुमार ! मैं यहीं हूं, कुमार !

कुमार : (अभी भी खोया-खोया) राजकुमारी ! तुम कहां चली गई थीं ! यह सब क्या था ? क्या था यह माया-जाल ? कैसी थी यह प्रणय-ज्वाला ? किसने पैदा की यह प्रणय-पिपासा ? राजकुमारी ! महानाश के समय भी तुम्हें यह प्रेम-लीला सुहाती है ?

संघमित्रा : (तड़पकर दृढ़ स्वर में) कुमार ! नारी जिसे एक बार प्यार करती है, उसके हाथों अपना रक्त उलीचा जाने पर भी वह उसे प्यार करती रहती है।

कुमार : (कांपकर) राजकुमारी !

संघमित्रा : (सहसा हँस पड़ती है) डर गये, कुमार ! डर गये।

कुमार : हां कुमारी ! मैं डर गया। युद्ध-भूमि में महाप्रलय देखकर भी जो नहीं डरा ! पिता को भूलुण्ठित देखकर भी जिसने आह तक नहीं की। मगध-सम्राट् की भृकुटी भी जिसकी दृष्टि को नहीं झुका सकी, वही कुमार इस क्षण डर गया।

संघमित्रा : (हँसती हुई) अचरज है कि कुमार वीर होकर डर गये ! क्या मैं जान सकती हूं कि कुमार के इस डर का कारण क्या है ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुमार : दया !

संघमित्रा : (कांपकर) दया ?

कुमार : हां कुमारी ! मुझे डर है कि कहीं तुम्हारे प्रणय की वर्तमान स्थिति मेरी प्राणरक्षा का कारण न बने। तुम्हारा प्रेम मुझे पथ से विचलित न कर दे।

संघमित्रा : (कांपकर) तो···तो तुम जानते हो। तुम सबकुछ जानते हो। तुम्हें वे दिन याद हैं जब मगध के अतिथि के रूप में तुम मृगया खेलने हमारे यहां आये थे···जब सम्राट् ने तुम्हारे हस्तलाघव की प्रशंसा की थी और तुमने मेरे रूप की ?

कुमार : कलिंग का कुमार कुछ भी होने से पहले पुरुष है, राजकुमारी ! और पुरुष जो प्रशंसनीय है, उसकी प्रशंसा करना अपना कर्तव्य समझते हैं।

संघमित्रा : (संभलकर) जानती हूं और तभी पूछती हूं कि यदि मेरा प्रणय तुम्हारी प्राण-रक्षा चाहता है, तो इसमें बुरा क्या है ?

कुमार : प्रणय प्राणों की भिक्षा नहीं मांगा करता, राजकुमारी। मगध-सम्राट् ने मेरा सिर काट डालने की आज्ञा दी है। मैं उस आज्ञा का सम्मान करूंगा। कुछ क्षण बाद जब मनमोहिनी उषा जागरण का संगीत अलापती हुई आसमान से उतरेगी, तब उसीके साथ मेरी मृत्यु भी मेरा आलिंगन करने आयेगी। मेरी मृत्यु में ही मेरा कल्याण है। कलिंग के महानाश की वेला में जब उसकी असंख्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

युवतियों का सुहाग-सिंदूर रक्त से घुल गया हो, तो मैं तुम्हारी मांग में सिंदूर नहीं भर सकता। आज मेरी आंखें तुम्हारा रूप देखने में अशक्त हैं...आज मेरे कान तुम्हारी प्रणय-रागिनी सुनने के अयोग्य हैं।

संघमित्रा : कुमार ! कुमार !!

(चंडगिरि का प्रवेश)

चंडगिरि : देवि !

संघमित्रा : कौन ! चंडगिरि, तुम आ गये ?

चंडगिरि : हां, देवि ! आपको बहुत देर हो चुकी है।

संघमित्रा : कोई आया ?

चंडगिरि : नहीं देवि !

संघमित्रा : तो अभी ठहरो...

चंडगिरि : देवि, सम्राट् की आज्ञा का उल्लंघन हो रहा है।

संघमित्रा : (विनय) थोड़ा, बस थोड़ा और, चंडगिरि ! बात अभी अधूरी है।

चंडगिरि : देवी की जैसी आज्ञा !

(जाता है)

संघमित्रा : (निःश्वास) गया ! उफ कुमार...

कुमार : (व्यंग्य) देवी संघमित्रा प्रणय के लिए इतना झुक सकती हैं ?

संघमित्रा : (चोट खाकर) लक्ष्य प्राप्त करने के लिए कुछ भी करना चातुर्य कहलाता है, कुमार !

कुमार : (आवेश) पर मैं ऐसे चातुर्य से घृणा करता हूं, देवि !

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मैं अपना मस्तक कभी नहीं झुका सकता, कभी नहीं। मैं मर सकता हूं, पर किसीकी दया का भिखारी नहीं बन सकता।

संघमित्रा : (गहरा निःश्वास) कुमार! तभी तो मैं तुम्हें प्रेम करती हूं।

कुमार : परन्तु कुमारी! मैं मगध-सम्राट् का बंदी हूं। मुझे तुमसे प्रेम करने का अधिकार नहीं है।

संघमित्रा : (उसी तरह) कुमार, मैं तुम्हें मुक्त करा सकती हूं। अभी इसी समय करा सकती हूं।

कुमार : नहीं! मैं मगध-सम्राट् की दया नहीं चाहता। जो मेरे देश का दुश्मन और मेरे पिता का हत्यारा है, मैं उसकी दया नहीं चाहता। मेरे शरीर में जबतक प्राण है, तबतक मैं शत्रु की दया स्वीकार नहीं करूंगा। मैं कलिंग की वीरता को कलंकित नहीं करूंगा।

संघमित्रा : (शांत) दया नहीं, कुमार! वह दया नहीं है।

कुमार : दया नहीं तो क्या है?

संघमित्रा : पश्चात्ताप!

कुमार : पश्चात्ताप! (सहसा अट्टहास) खूब! अत्याचारी अशोक और पश्चात्ताप! नाग के दांतों में अमृत! देवी संघमित्रा, तुम क्या कह रही हो?

संघमित्रा : मैं ठीक कह रही हूं, कुमार। तुम्हारे आने के बाद से सम्राट् पश्चात्ताप की आग में जल रहे हैं। तुम्हारे उन वाक्यों ने उन्हें आलोडित कर दिया है। मैंने चंडगिरि से

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसीलिए समय मांगा है। तुम्हारी मुक्ति का संदेश आने-वाला है। भिक्षु उपगुप्त सम्राट् के पास गये हैं।

कुमार : भिक्षु उपगुप्त सम्राट् के पास गये हैं!

संघमित्रा : डरो नहीं, कुमार! वह तुम्हारे प्राणों का दान मांगने नहीं गये हैं।

कुमार : और किसलिए गये हैं?

संघमित्रा : तुमसे बातें करने की आज्ञा मांगने के लिए। जहां-तक तुम्हारे प्राणों के दान का संबंध है, मैं चाहती, तो आंचल फैलाकर सम्राट् से तुम्हें मांग लेती. पर...

कुमार : पर...

संघमित्रा : पर मैं तुम्हें अपमानित करना नहीं चाहती थी।

कुमार : (चकित) मैं देवी का आशय नहीं समझा।

संघमित्रा : आशय स्पष्ट है, कुमार! तुम्हारी भांति मैं भी समझती थी कि तुमपर दया करना तुम्हारा अपमान होगा। मैंने सम्राट् से तुम्हारे लिए एक शब्द भी नहीं कहा। पर दूसरी ओर उनके भीतर पश्चात्ताप की आग धधकाने में भी कुछ नहीं उठा रक्खा। मैं भिक्षु उपगुप्त की आज्ञा से...

कुमार : क्या...क्या तुम भिक्षु उपगुप्त की आज्ञा में विश्वास रखती हो?

संघमित्रा : वह मेरे होनेवाले गुरु हैं।

कुमार : राजकुमारी!

संघमित्रा : ठीक कह रही हूं, कुमार!

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुमार : तो तुम यहांतक पहुंच गईं ! मुझे बचाने के लिए तुमने इतना कुछ कर डाला ।

संघमित्रा : तुम्हें नहीं कुमार ! अपने को बचाने के लिए... अपने स्वार्थ के लिए ।

कुमार : ठीक कहती हो, देवि ! यह स्वार्थ ही है । सब-कुछ स्वार्थ है, इस स्वार्थ से कोई भी अछूता नहीं है ; मैं भी नहीं हूं । मेरा देश-धर्म, मेरी वीरता सब-कुछ स्वार्थ है । परन्तु देवि ! मेरा स्वार्थ बहुत बड़ा है । वह अभी पूरा नहीं हुआ है । सम्राट् का पश्चात्ताप अभी तल पर ही है । उसे अन्तर की गहराई में जाने के लिए अभी और चोट की आवश्यकता है । विनाश के सम्पूर्ण हुए बिना निर्माण असम्भव है ।

संघमित्रा : क्या अभी और विनाश होना शेष है ?

कुमार : बहुत शेष है, देवि !

संघमित्रा : (कंपित) क्या कहते हो ?

कुमार : (आवेश के प्रवाह में) ठीक कहता हूं, राजकुमारी ! अभी कलिंग का रक्त-यज्ञ पूर्ण होना शेष है, अभी मेरा वध शेष है, अभी तुम्हारा हृदय टूटना शेष है, अभी अशोक को अपने पश्चात्ताप से उत्पन्न की गई आज्ञा का उल्लंघन देखना शेष है...

संघमित्रा : (पागल सी) क्या...क्या कहते हो...

कुमार : ठीक कहता हूं । वह देखो, चंडगिरि फिर आ गया है इस बार वह लौटनेवाला नहीं है । मेरा समय आ पहुंचा है ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(चंडगिरि का प्रवेश)

चंडगिरि : देवि, सम्राट् की आज्ञा-पालन करने की वेला आ पहुंची है।

संघमित्रा : (व्याकुल) चंडगिरि, दो क्षण और ! बस, वे आने ही वाले हैं।

कुमार : नहीं चंडगिरि, अब किसीके आने की प्रतीक्षा नहीं है। तुम यहीं ठहरो और सुनो देवि संघमित्रा, मैं तुमसे प्रेम करता हूं। अपने जीवन से बढ़कर प्रेम करता हूं। तुमसे भी अधिक मैं अपने देश से प्रेम करता हूं। उससे भी अधिक मैं मनुष्य से प्रेम करता हूं। वही मनुष्य आज सोया हुआ है। उसे जगाने के लिए अभी और बलिदान की जरूरत है...

संघमित्रा : (टोककर) कुमार, सुनो तो, सुनो...

कुमार : मैं बहुत सुन चुका, कुमारी ! अब तुम्हें सुनना है। सुन लो, कलिंग-कुमार प्राणों से नहीं डरता, नारी से नहीं डरता। संघमित्रा ! यदि तुम सचमुच मुझसे प्रेम करती हो तो समझ लो कि तुम्हारा प्रियतम कलिंग के रक्तयज्ञ में अपने रक्त की पूर्णाहुति देकर उसे सम्पूर्ण करना चाहता है। और वह तुम्हें भी निमंत्रण देता है कि तुम भी इस यज्ञ में आहुति दो, अपने प्रणय का बलिदान करो, कलिंग-नारियों के रोदन में अपना रोदन मिला दो, जिससे धरती-अंबर कांप उठें, महानाश पूर्ण हो जाय और महती निशा के बाद उषा का उदय हो...

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(बोलता-बोलता वह सहसा बुत-से बने चंडगिरि की ओर बढ़ता है।)

कुमार : लाओ चंडगिरि, कहां है तुम्हारी कटार ? तुम्हारे हाथों से मेरे हाथों में कम शक्ति नहीं है।)

(चंडगिरि पागल-सा समझ ही नहीं पाता। बिजली-सी कौंधती है। कुमार कटार छीन लेता है। चंडगिरि और संघमित्रा जागकर दौड़ते हैं।)

चंडगिरि : कुमार, क्या करते हो ? मेरी कटार दो। मेरी कटार दो।

संघमित्रा : कुमार···कुमार, कटार छोड़ दो। (दोनों कटार छीनना चाहते हैं, पर उससे पूर्व कुमार उसे अपनी छाती में भोंक लेते हैं। राजकुमारी चीखती हैं।) ओह···कुमार··· कुमार ! तुमने क्या किया ? तुमने कटार छाती में मार ली। ओह, कोई है ? चंडगिरि !

(कटार निकालना चाहती है। कुमार रोकता है।)

कुमार : चंडगिरि···चंडगिरि, कटार निकाल लो।

चंडगिरि : (कटार खींचता है और कुमार आह भरता है।) मैं जाता हूं और सम्राट् से कहता हूं कि कुमार ने अपने हाथ से अपनी छाती में कटार भोंककर अपने प्राणों का अन्त कर दिया। (भागना चाहता है।)

संघमित्रा : (व्याकुल) चंडगिरि ! कटार मुझे दो···वह कटार मुझे देते जाओ।

चंडगिरि : (मुड़कर) राजकुमारी ! चंडगिरि इतना मूर्ख

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नहीं है कि वह कटार आपके हाथ में देकर आपको आत्म-हत्या का अवसर दे।

(चला जाता है।)

संघमित्रा : (जैसे दौड़ती है) चंडगिरि, रुको चंडगिरि !

कुमार : (संघमित्रा का आंचल पकड़कर) कहां जाती हो, संघमित्रा ! ठहरो ! प्रणयवेला में मुझे अकेला न छोड़ो। मैं अब जानेवाला हूं। मन भरकर प्यार कर लो और फिर...

महेन्द्र : (प्रवेश करते-करते) संघमित्रा ! क्षमा कर दिया, सम्राट् ने कुमार को क्षमा कर दिया ! कुमार अब स्वतंत्र हैं ! उनका देश स्वतंत्र है ! (सहसा नीचे दृष्टि जाती है) क्या...यह क्या...यह रक्त कैसा ! और कुमार...क्या कुमार का...ओह ! चंडगिरि दो क्षण भी न रुक सका।

संघमित्रा : चंडगिरि को कुछ नहीं करना पड़ा, भैया! सम्राट् की दया की बात सुनने से पूर्व ही कुमार ने चंडगिरि की कटार से अपने प्राणों का अंत कर डाला।

महेन्द्र : यह क्या हुआ, भंते! यह क्या हुआ? नव-प्रभात में...

भिक्षु : शांत देवि, संघमित्रे ! शांत महेंद्र ! जो कुछ हुआ वह ठीक ही हुआ। यह प्राणों का अंत नहीं है। कुमार ने कलिंग के इस रक्त-यज्ञ में पूर्णाहुति दी है।

संघमित्रा : (कांपकर) भंते !

महेन्द्र : क्या कह रहे हैं, भंते ?

भिक्षु : ठीक कह रहा हूं। उसने मेरा मार्ग प्रशस्त कर दिया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसके बलिदान की नींव पर मनुष्यता जागेगी। अशोक अपनेको पहचानेगा, अवश्य पहचानेगा। महानाश जितना पूर्ण होता है, निर्माण भी उतना ही दृढ़ होता है।

कुमार : (नेत्र खोलकर, शिथिल पर शांत स्वर में बोलता है) प्रणाम भंते ! प्रणाम, नमो बुद्धाय ! नमो बुद्धाय ! बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि।

(कहते-कहते कुमार का श्वास रुक जाता है। नेत्र मुंद जाते हैं। राजकुमरी चीख मारकर गिर पड़ती है। तभी सम्राट् अशोक चंडगिरि के साथ शीघ्रता से घबराये हुए प्रवेश करते हैं। चंडगिरि की भयानकता तरल होकर अब दयनीय लगती है। सम्राट् अशोक के मुख पर पराजय गहरी होती जा रही है।)[1]

चंडगिरि : राजकुमारी साक्षी हैं, देव ! कुमार ने मेरे हाथ से कटार छीनकर अपनी छाती में भोंक ली।

अशोक : (क्रोध) और तुम खड़े-खड़े देखते रहे...तुम, अन्धे हो गये...तुम्हारे हाथों की शक्ति समाप्त हो गई। तुमने अपनी आखों के सामने मेरी आज्ञा की अवहेलना होने दी। तुमने...मैं पूछता हूं, तुम्हारे हाथ से कुमार ने कटार कैसे छीन ली...

महेन्द्र : (आगे बढ़कर) कटार कैसे छीन ली, यह तो आप जानते होंगे, पर भैया ! चंडगिरि ठीक कहता है। मैं जब यहां

१. रंगमंच पर प्रस्तुत करते समय यह अंक यहीं समाप्त हो जाना चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पहुंचा तो सबकुछ समाप्त हो चुका था। कुमार ने आपकी दया स्वीकार नहीं की।

अशोक : (सहसा महेन्द्र को देखकर) कुमार ने मेरी दया स्वीकार नहीं की ? (सहसा कुमार के पास बैठ जाता है) कुमार! कुमार ! तुम जीत गये । मैं पराजित हो गया। तुम्हारी बहिन ने ठीक कहा था कि तुम मेरी दया स्वीकार नहीं करोगे, कभी नहीं करोगे। तुमने सचमुच वही किया!

संघमित्रा : (आंखों में आंसू भरे चकित) कुमार की बहिन ! कहां है वह ? क्या वह आपके पास आई थी ?

(सहसा राधागुप्त के साथ महारानी कारुवाकी और भिक्षुणी-वेशधारिणी राजकुमारी का प्रवेश। महारानी दुःखी हैं और राजकुमारी के मुख पर अतिशय करुण गम्भीरता है।)

राधागुप्त : इधर से महारानी ! इधर आइये।

(वे सब वहां आते हैं, जहां कुमार चिरनिद्रा में सोया है। उन्हें देखकर संघमित्रा खड़ी हो जाती है।)

संघमित्रा : कौन भाभी और...और कलिंग की राजकुमारी।

कारुवाकी : हां,कल जो कलिंग की राजकुमारी थी, वही आज भिक्षुणी है, लेकिन यह क्या हुआ, संघमित्रा ? तुम इतना भी नहीं कर सकीं !

संघमित्रा : प्रेम के पाश से मानवता का पाश प्रबल निकला। भाभी, कुमार ने सम्राट् को पराजित करने के लिए नारी का दर्प चूर कर डाला।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

राजकुमारी : नहीं, देवि संघमित्रा ! यह कुछ नहीं, कुमार केवल कलिंग का रक्त-यज्ञ सम्पूर्ण करना चाहते थे— और वही उन्होंने किया। रात्रि के बाद उषा जब अपने प्राणों का हनन कर डालती है तभी अरुणोदय होता है।

(कहते-कहते भिक्षुणी-वेशधारिणी राजकुमारी घुटने टेक कर कुमार के पास बैठना चाहती है। सहसा प्रेम का आवेग उमड़ता है। वह दोनों हाथों से कुमार को पकड़ कर चीत्कार कर उठती है।) भैया···भैया···

(तब सहसा अशोक दोनों हाथों से मुंह ढककर पीछे हट जाते हैं। चंडगिरि, राधागुप्त और महेन्द्र भी मुड़ते हैं। संघमित्रा शीघ्रता से राजकुमारी को छाती से चिपका लेती है और रोती हुई कहती है।)

संघमित्रा : बहिन···बहिन, हम दोनों आज दुखिनी हैं। हमें इस शोक को वहन करना है। हमारे शोक में ही मानवता का कल्याण है।

(भिक्षु उपगुप्त फिर आगे आते हैं)

उपगुप्त : तथागत के मार्ग पर शोक के लिए स्थान नहीं है, भिक्षुणी !

(राजकुमारी सहसा अपनेको छुड़ाकर उन्हें देखती है)

राजकुमारी : (तीव्रता से) मैं नहीं चाहती तथागत का व्रत। ले लो अपने वस्त्र। मैं राजकुमारी बनना चाहती हूं। मैं फिर साधारण नारी बनना चाहती हूं। मैं प्रतिशोध लेना चाहती हूं। मैं कलिंग के इस निर्मम महानीरक का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रतिशोध लेना चाहती हूं। मैं हत्यारे अशोक का वध करना चाहती हूं।

संघमित्रा : कुमारी...कुमारी...

(आगे बढ़कर कुमारी को फिर छाती में भर लेती है। कुमारी छूटने का प्रयत्न करती है।)

राजकुमारी : छोड़ दो, मुझे छोड़ दो...

अशोक : (आगे बढ़कर कुमारी के पास घुटने टेककर बैठ जाते हैं) कुमारी ! तुम ठीक कहती हो। मैं हत्यारा हूं। मैं तुम्हारे पिता का हत्यारा हूं। मैं तुम्हारे भाई का हत्यारा हूं। तुम मेरा वध करो। लो (कटार देता है) इस कटार से मुझे मार डालो। मेरी हत्या के बाद ही यह यज्ञ पूर्ण होगा। लो, यह कटार...लो...

राजकुमारी : (विचलित होकर) नहीं...नहीं...

अशोक : (उसी आवेश में) लो कुमारी ! मैं प्रस्तुत हूं...

राजकुमारी : नहीं...नहीं...यह क्या है ? यह मुझे क्या हो रहा है ? भैया, भैया...

(कुमारी दोनों हाथों से मुंह ढककर चीत्कार कर उठती है। भिक्षु उपगुप्त पास आकर उसके सिर पर हाथ रखते हैं।)

उपगुप्त : शांत भिक्षुणी, शांत ! अशोक का वध करने के लिए अभी और संयम की आवश्यकता है। कुमार ने उसीके लिए प्राणों का दान दिया है। उसीके लिए तुम्हें इस इच्छा का दान करना होगा।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

(राजकुमारी सहसा भिक्षु के पैर पकड़ लेती है।)

राजकुमारी : क्षमा, गुरुदेव, क्षमा !

(भिक्षु उसकी पीठ पर हाथ फेरते हैं, सब सिर झुकाकर मानो उस आशीर्वाद को ग्रहण करते हैं। करुणा नव-प्रकाश में परिवर्तित होती दिखाई देती है। मंच पर नव प्रभात की किरणें चमकती हैं, कुमार के शव पर इन्द्र-धनुष-सा बना है और परदा-धीरे-धीरे गिरने लगता है।)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपसंहार

(पहले अंकवाला दृश्य। अशोक गंभीर मुद्रा में इधर-से-उधर, उधर-से-इधर घूम रहे हैं। वैसे पास आकर देखें तो वह बहुत उद्विग्न हैं। रह-रहकर वह खड़े होकर शून्य में दृष्टि गड़ाकर देखने लगते हैं। फिर आप-ही-आप बोल उठते हैं।)

अशोक : (स्वगत) क्या से क्या हो गया? पिछले दस दिन में वह व्यथा, जो किसी क्षण अचानक उमड़ पड़ी थी, मुझे कहां ले उड़ी! जैसे मैं अबतक बराबर कोई भयंकर स्वप्न देख रहा था...मैं अपने को कितना शक्तिशाली समझता था। मेरा नाम ही संसार को त्रास देनेवाला था। मैं साकार भय था, पर हुआ यह कि अवसर आने पर मैं एक बंदी से अपनी आज्ञा नहीं मनवा सका। दस दिन तक जिसने धरती को मुर्दों और घायलों से भर दिया, जिसने इतनी हत्याएं कीं कि उनकी गिनती तक नहीं हो सकती, उसीने जब चाहा तो वह एक मनुष्य के प्राण नहीं बचा सका। (ऊपर देखकर) मैं एक व्यक्ति के प्राण नहीं बचा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सका। उस एक ने जैसे मेरे शक्तिशाली जीवन को झक-झोर दिया। उसने मुझे चुनौती दी—तू शक्तिशाली नहीं, खोपड़ी ठुकरानेवाला गीदड़ है। गीदड़...(कातर भाव) गीदड़...मैं गीदड़ और...और इससे भी अचरजवाली बात तो यह है कि मैं इस चुनौती को झुठला नहीं सका। उल्टा यह ज्ञान मुझे नया मार्ग सुझानेवाला बन गया। देखते-देखते जैसे भयंकर स्वप्नवाली रात बीत गई। उज्ज्वल प्रभात आ पहुंचा। कलंक धुल गया, मेरी आत्मा निर्मल होने लगी, पर...पर हाहाकार, वह दारुण चीत्कार, वह असंख्य जीवित चिताओं से उठनेवाली संतप्त आहें, वह खंडहरों से उठती उल्लुओं की हू-हू और चमगादड़ों की चीं-चीं, वह आबाल, वृद्ध, वनिताओं के नेत्रों से बहती हुई ज्वाला, वह...वह क्या मुझे नई सृष्टि करने देगी? उसे भूलकर क्या मैं नव-निर्माण कर सकूंगा...(एक क्षण मौन रहकर) लेकिन भिक्षु कहते हैं—हां, तुम नव-निर्माण कर सकोगे। तथागत का मार्ग उसी नव-निर्माण का संदेशवाहक है...(भावेश) तथागत का मार्ग। अहिंसा और मानवता का मार्ग...क्या मैं उसपर चल सकूंगा? क्या मैं प्रेम से दिग्विजय कर सकूंगा? कुछ समझ में नहीं आता...क्या यह युद्ध बंद हो जायगा (कटार लेकर) क्या ये अस्त्र-शस्त्र समाप्त हो जायंगे...क्या ये संघर्ष मिट जायंगे?

(महारानी कारुवाकी का प्रवेश)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कारुवाकी : देव !

अशोक : (चौंककर) कौन ? देवि, तुम्हें आना पड़ा ?

कारुवाकी : हां स्वामी, राह देखते-देखते जब बहुत देर हो गई, तो मुझे आना पड़ा। देखती हूं, स्वामी इधर बहुत सोचने लगे हैं।

अशोक : और बिना कार्य के बहुत सोचना गर्भपात के समान है। देवी ठीक कहती हैं। पर देवि, क्या सचमुच नया युग आनेवाला है ? क्या सचमुच जीवन प्रेम और सौंदर्य से भर जायगा? क्या सचमुच सुख के लिए लड़ाई नहीं होगी?

कारुवाकी : स्वामी अब ऐसा सोचते हैं, तो वह होगा ही।

अशोक : (उत्सुकता से) वह होगा ! सच···वह होगा।

कारुवाकी : अवश्य होगा, स्वामी ! भिक्षु कहते थे कि सम्राट् इतना सोचते हैं तो अवश्य नवयुग का उदय होगा। उसीके लिए युवराज ने प्राणों की आहुति दी है।

अशोक : सच !

कारुवाकी : हां स्वामी ! जब अपने अंतर में संघर्ष मचता है तभी मनुष्य अपनेको पहचानता है और अपनेको पहचानने पर मानव और मानवता को पहचानना कठिन नहीं रह जाता।

अशोक : कितना सुन्दर कहा तुमने, देवि ! कितना सुन्दर ! मुझे नहीं पता था कि तुम इतना जानती हो।

कारुवाकी : मैं कुछ नहीं जानती, स्वामी ! यह सब मुझे भिक्षु उपगुप्त ने बताया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अशोक : भिक्षु ठीक कहते हैं। (एकदम) वह इस समय कहां हैं, देवि ?

कारुवाकी : वह इस समय देवी संघमित्रा के पास हैं, स्वामी ! देवी ने दीक्षा लेने का निश्चय कर लिया है। मैं आपको वहीं ले चलने के लिए आई थी। (सहसा बुद्ध-मंत्र गाने का स्वर उठता है) सुनो-सुनो स्वामी ! कितना मधुर कितना प्रिय, कितना आश्वस्त करनेवाला स्वर है !

(स्वर उठता है।)

स्वर : बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि।

अशोक : (भावुक) सचमुच बड़ा प्रिय, बड़ा मीठा स्वर है। कौन गाता है, देवि ?

कारुवाकी : कलिंग की राजकुमार, देवी संघमित्रा और रेवा।

अशोक : रेवा ! रेवा भी भिक्षुणी बनने जा रही है ?

कारुवाकी : और मैं भी। मेरा मन भी यह मंत्र गाने को करता है। गाओ स्वामी ! आप भी गाओ—बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि।

अशोक : मैं भी गाऊं, मैं भी पुकारूं ? देखूं, प्रयत्न करूं शायद किसी दिन मैं भी इस मंत्र के योग्य हो सकूं। (गाता है) बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि।

(मुख पर एक ज्योति उभरती है। नेत्रों का प्रकाश तरल होता है। कारुवाकी नेत्र मूंदकर आत्म-विभोर हो उठती

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है। तभी रेवा का स्वर उठता है। वह तन्मय होकर गा रही है।)

गीत

बुद्ध-शरण चल, संघ-शरण !
धम्म-शरण चल, बुद्ध-शरण !
बीती रात भयंकर काली,
नव-प्रभात की फैली लाली,
दशों दिशाओं में रव गूंजा,
भव-भय-बाधा-दुःख-हरण !
बुद्ध शरण चल, संघ-शरण !
धम्म-शरण चल, संघ-शरण !
गैरिक चीर उषा लहराये,
मार्ग तथागत का दिखलाये,
जीवन में निर्वाण सुलभ है,
जग में हो स्वर्णावतरण !
बुद्ध-शरण चल, संघ शरण !
धम्म-शरण चल, संघ-शरण !
सत्य अहिंसा का युग आया,
करुणा का सागर लहराया,
शांत हुई प्रलयंकर ज्वाला.
मिटा द्वेष संघर्षण रण।
बुद्ध-शरण चल, संघ-शरण।
धम्म-शरण चल, बुद्ध-शरण।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

धम्म-राज्य की वेला आई,
रोती मानवता मुस्काई,
प्रेम-प्रीति जयमाला लेकर,
संस्कृति करती मनुज-वरण !
बुद्ध-शरण चल संघ-शरण !
धम्म-शरण चल बुद्ध-शरण !

(स्वर पास आता जाता है। रेवा संघमित्रा और कलिंग-कुमारी के साथ मंच पर प्रवेश करती है। वह तन्मय होकर गा रही है। शेष दोनों शांत-मन उसके साथ हैं। सबके मुख पर प्रकाश है। अशोक और कारुवाकी सहसा सबको प्रणाम करते हैं। वे गाते-गाते दूसरी तरफ जाते हैं। अशोक और कारुवाकी दोनों प्रणाम की मुद्रा में झुके रह जाते हैं। स्वर दूर जाता है तो अशोक विश्वास के स्वर में कहता है।)

अशोक : देवि ! मैं नहीं जानता, मैं अभी इस मंत्र का अधिकारी हूं या नहीं। मुझे अपनी परीक्षा लेनी है, पर एक बात आज मैं अवश्य कर सकता हूं। मैं निश्चय करता हूं कि अब दिग्विजय नहीं धर्म-विजय होगी; भेरी-घोष धर्म-घोष में परिवर्तित कर दिया जायगा। अब फिर धरती माता अपनी सतान का रक्त पीने को विवश न होगी, अब फिर घायलों के चीत्कार से आकाश नहीं कांपेगा। अब फिर विधवाओं और अनाथों के करुण-क्रन्दन से शांति की हत्या नहीं होगी। अब फिर वह रक्त-रंजित इतिहास अपने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

को नहीं दोहरायेगा (गहरा श्वास) मैं देख रहा हूं देवि ! आनेवाले युग के लोग अपने दुःखों और अभावों का नाश शक्ति के प्रयोग से नहीं, प्रेम के प्रयोग से किया करेंगे।

कारुवाकी : प्रियतम ! देव ! आप कितने महान् हैं, कितने ?

अशोक : महानता मुझसे अभी दूर है, देवि ! पर मैं प्रयत्न करूंगा और मैं जानता हूं कि मैं सफल हूंगा ।

(भिक्षु उपगुप्त का प्रवेश)

उपगुप्त : जो प्रयत्न करते हैं, सफलता उनके चरण चूमती है, सम्राट् !

(भिक्षु को देखकर दोनों फिर प्रणाम की मुद्रा में झुक जाते हैं। भिक्षु आशीर्वाद के लिए हाथ उठाते हैं और परदा यहीं गिरता है।)

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
वाराणसी।
आगत क्रमांक 1973
दिनांक .....

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मंडल द्वारा प्रकाशित प्रमुख साहित्य

कथा-कहानी

महाभारत-कथा (सजिल्द)	च० राजगोपालाचार्य	८.००
दशरथनन्दन श्रीराम (सजिल्द)	" "	८.००
विनोबा की बोधकथाएं	विनोबा	२.००
उदयन-कथा	विराज	०.७५
भागवत-कथा	सूरजमल मोहता	४.००
ध्रुवोपाख्यान	घनश्यामदास बिड़ला	०.३०
वेद-मंत्रों के प्रकाश में	सम्पूर्णानन्द	१.५०
मानवधर्म की आख्यायिकाएं	नानाभाई	१.२५
सती की तेज	राजेन्द्रसिंह गौड़	२.००
त्याग का मूल्य		१.५०
रामकीर्ति	स्वामी सत्यानन्द पुरी	४.००
सप्तदशी	सं० विष्णु प्रभाकर	२.००
जीवन-पराग	विष्णु प्रभाकर	१.२५
खंडित पूजा (सजिल्द)	"	३.५०
प्रकाश की रेखा	ऋषिजित भट्टाचार्य	१.५०
ईंट की दीवार	मौलाना रूमी	१.२५
दिव्य जीवन की झांकियाँ	यशपाल जैन	३.००
देवी का दान	वा० भ० वोरकर	४.००
बहता पानी	निर्मला लक्ष्मीनिवास बिड़ला	८.००

नाटक : एकांकी

रीढ़ की हड्डी	सं० विष्णु प्रभाकर	१.५०
नव-प्रभात	विष्णु प्रभाकर	१.५०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शारदीया	जगदीशचन्द्र माथुर	१.५०
नाश का विनाश	मामा वरेरकर	३.००
नई राह	हरिकृष्ण प्रेमी	२.५०
बालकों का विवेक	टॉल्स्टाय	०.७५

उपन्यास

तट के बन्धन (सजिल्द)	विष्णु प्रभाकर	३.५०
देवदासी	वा. भ. वोरकर	३.५०
नवीन यात्रा	मनोज वसु	२.५०
मास्टर महिम	"	४.००
ज्वालामुखी (सजिल्द)	अनन्तगोपाल शेवड़े	५.००
मोगंरा फूला (सजिल्द)	वि० स० खांडेकर	७.५०
विराट	स्टीफेन ज्विग	१.५०
जिन्दगी दांव पर	"	३.००
भाग्य की विडम्बना	"	२.७५
स्वाभिमानी	तुर्गनेव	२.००
प्रेम-प्रपंच	"	२.००
रंभा (सजिल्द)	दापन ह्यु मोरिये	५.५०
अनोखा	विक्टर ह्यूगो	२.५०
[illegible]	सुब्रह्मण्यम	३.५०
प्रेम और प्रकाश	आंद्रे जीद	२.००
प्रकाश की छाया में	नरेन्द्रपाल सिंह	४.००
जागे तभी सवेरा	जय भिक्खू	५.००
पद्मनी का शाप	लक्ष्मीनिवास बिड़ला	७.५०
नियति के पुतले	पिनिशेट्टि श्रीराममूर्ति	६.००

सरस्वती विहार
पुस्तकालय

सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'मण्डल' का
नाटक-एकांकी साहित्य

१. रीढ़ की हड्डी
२. शारदीया
३. नाश का विनाश
४. नई राह
५. बीज का विवेक
६. ईश्वर का मन्दिर
७. मुरब्बी
८. कुम्हार की बेटी
९. भरत
१०. हमदर्दी
११. नव प्रभात

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri